नया जीवन

भाग एक

कक्षा छह के लिए हिंदी की पूरक पाठ्यपुस्तक

अनिरुद्ध राय

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
मई 1997 बैसाख 1919
पाँचवाँ पुर्नमुद्रण
सितम्बर 2002 भाद्रपद 1924

PD 275T ML

एन सी.ई.आर टी के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन सी ई आर टी कैम्पस	108, 100 फीट रोड होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी डब्ल्यू सी कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32 बी टी रोड सुखचर
नई दिल्ली 110016	बैंगलूर 560085	अहमदाबाद 380014	24 परगना 743179

रू. 21.00

प्रकाशन प्रभाग मे सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविन्द नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा पैलिकन प्रेस, A-45, नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस नई दिल्ली 110 028 द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के लागू होने के साथ ही ऐसी शिक्षण सामग्री की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा जो इस नई शिक्षा नीति के उद्देश्यो की प्राप्ति मे सहायक हो। इस नीति के अनुसार शिक्षा बाल केंद्रित होगी और बच्चो के सर्वांगीण विकास पर ध्यान दिया जाएगा। इस उद्देश्य-पूर्ति की दृष्टि से शिक्षाक्रम मे कुछ ऐसे विषयो के समावेश पर बल दिया गया है जिनसे शिक्षार्थियो मे प्रगतिशील, सामाजिक एव राष्ट्रीय चेतना तथा उदात्त जीवन मूल्यो के प्रति स्वस्थ अभिवृत्ति का विकास हो सके, ये विषय हैं राष्ट्रीय स्वतन्त्रता सग्राम का इतिहास, हमारी सांस्कृतिक विरासत, लोकतान्त्रिकता, धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक न्याय, समतामूलक समाज, नर-नारी समानता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि। इन विषयो को 'केंद्रिक शिक्षाक्रम' कहा गया है। इन विषयो के समावेश से भारत के राष्ट्रीय जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान मिलने की पूरी सभावनाएँ हैं।

उपर्युक्त केंद्रिक शिक्षाक्रम के सदर्भ मे विभाग ने उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6,7,8) पर हिंदी शिक्षण से सबधित पूर्व निर्धारित पूरक पुस्तकों पर नए सिरे से विचार करने और तदनुकूल पूरक पुस्तको का निर्माण करने की योजना का सकल्प किया। पूर्व निर्धारित पुस्तके थीं

कक्षा 6 - सक्षिप्त रामायण

कक्षा 7 - (1) सक्षिप्त महाभारत, (2) नया जीवन

कक्षा 8 - (1) जीवन और विज्ञान, (2) त्रिविधा

इन पर विचार करने के लिए एक विभागीय समिति गठित हुई। उसके बाद इस समिति द्वारा प्रस्तुत सस्तुतियो पर विचार करने के लिए भाषा-विशेषज्ञो की एक विचारगोष्ठी आयोजित की गई। इस कार्यगोष्ठी में परिषद् के निदेशक, विभागीय समिति के सदस्य, विभागाध्यक्ष तथा विषय-विशेषज्ञ समिति के सदस्यो ने भाग लिया। इस विचारगोष्ठी मे निर्णय लिया गया कि,

1 कक्षा 6 मे सास्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से पूर्व निर्धारित 'सक्षिप्त रामायण' के महत्त्व को देखते हुए उसे यथावत रखा जाए पर उसका पुनरीक्षण और

उसमें यथोचित सशोधन अवश्य कर लिया जाए।

2 कक्षा 7 मे भी पूर्व निर्धारित 'संक्षिप्त महाभारत' को यथावत् रखा जाए। सास्कृतिक विरासत और नैतिक जीवन मूल्यो की दृष्टि से उसे सर्वथा उपयुक्त समझा गया पर इसके भी पुनरीक्षण और यथोचित सशोधन का सुझाव दिया गया।

3 कक्षा 8 मे रामायण और महाभारत की ही भाँति किसी ऐसे प्रसिद्ध प्रबधात्मक काव्य को रखने का सुझाव प्रस्तुत किया गया जिससे भारत की गौरवमयी सस्कृति का परिचय छात्रो को मिले। इस दृष्टि से महाकवि अश्वघोष रचित 'बुद्धचरित' को उपयुक्त समझा गया। निश्चय किया गया कि रामायण और महाभारत के समान ही इस ग्रथ का भी सहज, सरल और रोचक हिंदी भाषा मे संक्षिप्त सस्करण तैयार किया जाए।

4 कक्षा 8 मे पूर्व निर्धारित 'जीवन और विज्ञान' तथा 'त्रिविधा' पूरक पुस्तक को हटाने का निर्णय लिया गया और यह सुझाव रखा गया कि कक्षा 6,7,8 मे क्रमश रामायण, महाभारत और बुद्धचरित के साथ-साथ एक-एक पूरक पुस्तक और रखी जाए। इन पूरक पुस्तको में हिंदी के अतिरिक्त भारत की हिंदीतर भाषाओं तथा कुछ विदेशी भाषाओं से भी ऐसी रचनाएँ शामिल की जाएँ जो आधुनिक राष्ट्रीय सदर्भों से जुडी हों तथा छात्रो मे व्यापक मानवीय और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास मे सहायक और प्रेरणादायी सिद्ध हो।

इन रचनाओ मे केंद्रिक शिक्षाक्रम से सबंधित कहानी, जीवनी, एकाकी, यात्रा वृत्तात, सस्मरण आदि का चयन किया जा सकता है।

भारत की हिंदीतर भाषाओ से उपर्युक्त प्रकार की रचनाओ को शामिल करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि इनके द्वारा हिंदी में अखिल भारतीय साहित्य की छवि उजागर हो ।

उपर्युक्त योजना के अंतर्गत कक्षा 6 के लिए पूरक पाठ्यपुस्तक के रूप मे 'सक्षिप्त रामायण' का सशोधित सस्करण तैयार किया गया है। इसके अतिरिक्त दूसरी पूरक पाठ्यपुस्तक 'नया जीवन भाग 1' का प्रणयन भी किया गया है। इसमे हिंदी के अतिरिक्त असमिया, उर्दू, गुजराती, तमिल, रूसी, पजाबी और बँगला कहानियो (हिंदी मे अनूदित) को रखा गया है, जो आज के सामाजिक एव राष्ट्रीय जीवन की समस्याओ और जीवनमूल्यो से जुडी हुई हैं, यथा अत करण की सात्विकता, आत्म परखता (जातक कथा), प्रगाढ मैत्री, एकात्मकता और मातृवत्सलता की महत्ता (अदल-बदल), भौतिक सुख-सुविधा की अपेक्षा स्वातन्त्र्य- प्रेम की श्रेष्ठता (कुत्ता और बाघ), दीन-दुखियो, जीव-जतुओ के प्रति प्रेम और सेवा-भावना (विशेष

पुरस्कार), स्वतत्रता सघर्ष के समय क्रातिकारी जीवन की एक झाँकी, गाधी जी के जीवन का एक प्रेरक प्रसग (एक फूल), शोषण और अन्याय के विरुद्ध जागरूकता (अन्याय के विरुद्ध), आदर्श शासक, दानशीलता, प्रजावत्सलता और न्यायप्रियता का चित्रण (दानी कुमणन), अपराध बोध और परोपकार की भावना से आत्मशुद्धि और उदात्तीकरण (शापमुक्ति), आधुनिक मानव का अहभाव (देवताओं की सभा मे लेखक), निरर्थक बात करने वालो के प्रति व्यग्य (बातूनी), बालश्रम का शोषण (जी, आया साहब), वर्ग विषमता मिटाने में बालक और प्रौढ़ों के सोच में अतर (भविष्य का भय)।

इन कहानियों से निश्चित ही हिंदी भाषा का वह रूप सामने आएगा जिसमें अखिल भारतीय जीवन की छवि प्रतिभासित होगी।

इस पुस्तक का निर्माण सामाजिक विज्ञान और मानविकी शिक्षा विभाग में उच्च प्राथमिक स्तर के लिए हिंदी पाठ्यपुस्तक-निर्माण योजना से संबद्ध डॉ अनिरुद्ध राय ने किया है, इसके लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। प्रस्तुत पुस्तक के निर्माण में हमें अनेक विद्वानों, लेखकों, शिक्षकों तथा भाषाशास्त्रियों का सहयोग मिला है, इसके लिए मैं उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ। जिन लेखकों एवं अनुवादकों ने अपनी रचनाएँ इस पुस्तक में सम्मिलित करने की अनुमति हमें दी है, उनके प्रति हम विशेष रूप से कृतज्ञ हैं।

मुझे विश्वास है कि बच्चों के भावात्मक विकास तथा चरित्र निर्माण में यह पुस्तक उपादेय सिद्ध होगी। इसके परिष्कार की दृष्टि से सुधी विद्वानों के सुझावों का हम सदा स्वागत करेंगे।

अशोक कुमार शर्मा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
मई 1997

आभार

इस पुस्तक के निर्माण में कृपापूर्ण योगदान के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् निम्नलिखित विद्वानो के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती है .

श्री निरंजन कुमार सिह, प्रोफ़ेसर माणिक गोविद चतुर्वेदी, डॉ आनद प्रकाश व्यास, श्री प्रभाकर द्विवेदी, डॉ. मानसिह वर्मा, श्रीमती देवलीना केजरीवाल, श्री रमेश उपाध्याय, श्रीमती संयुक्ता लूदरा, डॉ. श्यामबिहारी राय, कुमारी इद्रा सक्सेना, डॉ. (श्रीमती) सुधा सक्सेना और डॉ. जे. एल. रेड्डी ।

पाठ-सूची

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हू । जब भी तुम्हे सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा । क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोडो लोगो को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे है और आतमा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है ।

मो॰ क॰ गांधी

1. धन की खोज

बात प्राचीन युग की है।

एक गुरुकुल था – विशाल और प्रख्यात। उसके आचार्य भी बहुत ही विद्वान और यशस्वी थे।

एक दिन आचार्य ने सभी विद्यार्थियो को विद्यालय के प्रागण मे बुलाया और उनसे कहा, "प्रिय छात्रो, मैंने तुम्हे एक विशेष प्रयोजन से बुलाया है। मेरे सामने एक समस्या आ गई है। मेरी कन्या विवाह-योग्य हो गई है, किंतु उसका विवाह करने के लिए मेरे पास पर्याप्त धन नहीं है। समझ में नही आता कि क्या करूँ ?"

कुछ विद्यार्थी, जिनके माता-पिता धनवान थे, आगे बढे और बोले,

"गुरुदेव, हम अपने माता-पिता से धन माँग लाएँगे। आप उसे गुरु-दक्षिणा के रूप में स्वीकर कर लीजिएगा।"

आचार्य बोले, "मुझे इसमे सकोच होता है। तुम्हारे परिवार वाले सोचेंगे कि गुरु लोभी है। अपनी कन्या का विवाह शिष्यो के धन से करना चाहता है।"

आगे बढे हुए शिष्य पीछे हट गए। आचार्य सोच में पड़े रहे।

कुछ समय बाद आचार्य बोले, "एक उपाय है। तुम लोग धन ले आओ, किंतु माँगकर नहीं। तुम उसे ऐसे लाओ कि किसी को पता न चले। मेरा काम भी हो जाएगा और मेरी लाज भी रह जाएगी।"

शिष्यो ने बात मान ली।

जो विद्यार्थी धनी परिवारों के नही थे वे गुरु-सेवा से वंचित न रह जाएँ यह सोचकर आचार्य उन लोगो से बोले, "तुम भी अपने-अपने घरों से कुछ न कुछ ले ही आना, पर ध्यान रखना कि किसी की भी दृष्टि उसपर न पड़े। यदि किसी ने देख लिया तो वह वस्तु विवाह के लिए अशुभ हो जाएगी।"

शिष्यों ने विश्वास दिलाकर कहा, "हम जो कुछ भी लाएँगे, इसी प्रकार लाएँगे।"

दूसरे दिन से आज्ञाकारी शिष्य तरह-तरह की वस्तुएँ लाने लगे। आचार्य उन्हे प्रसन्नता से ग्रहण करते जाते।

कुछ दिनों बाद उन्होने देखा कि विवाह के लिए पर्याप्त सामग्री एकत्र हो गई है। परंतु एक विद्यार्थी ऐसा भी था जो अभी तक कुछ

न ला सका था। आचार्य ने उससे पूछा, "क्यों, तुम्हारे परिवार वाले बिलकुल ही धनहीन हैं ?"

विद्‌यार्थी बोला, "आचार्यवर, मेरे घर में किसी बात की कमी तो नहीं है, किंतु मैं कुछ ला नहीं पाया हूँ।"

"क्यो, क्या तुम गुरु-सेवा नहीं करना चाहते ?"

"नहीं गुरुदेव, यह बात नहीं है। आपने कहा था कि ऐसी वस्तु लाना जिसे उठाते समय कोई देख न रहा हो। मैंने बड़ी चेष्टा की, पर घर मे कभी ऐसा स्थान न मिला जहाँ कोई भी न देख रहा हो।"

"तुम झूठ बोल रहे हो। कभी-न-कभी तो कोई स्थान अवश्य रहता होगा जहाँ कोई न हो। तभी चुपके-से कुछ उठा लाओ।"

"गुरुदेव ठीक है। पर ऐसे स्थान में कोई दूसरा रहे या न रहे, मैं तो वहाँ रहता ही हूँ। अन्य कोई देखे या न देखे, किंतु मैं तो
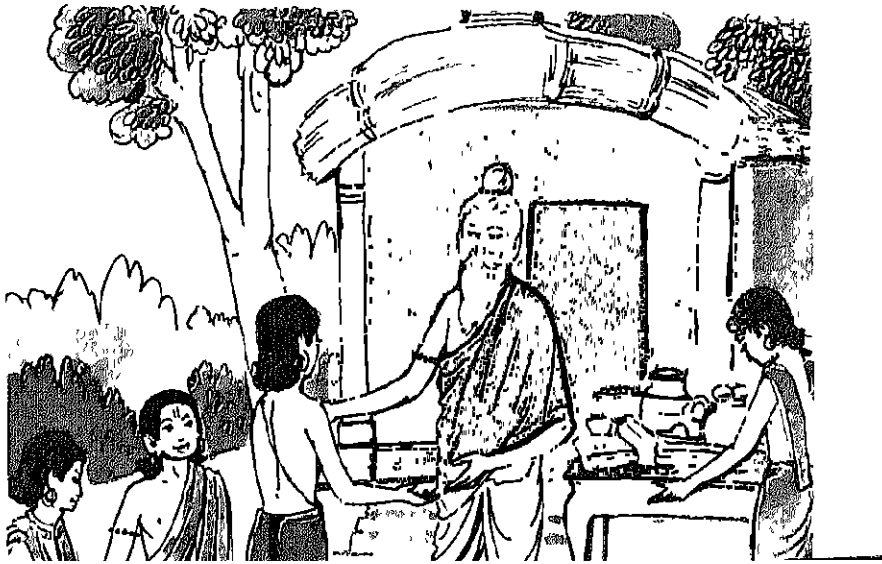
अपने कुकर्म को देखता ही रहूँगा।"

आचार्य ने तुरत उस शिष्य को गले लगा लिया और कहने लगे, "बस तू ही मेरा सच्चा शिष्य है। मेरे कहने पर भी तूने पाप-मार्ग नहीं अपनाया। यह तेरे चरित्र की दृढ़ता का परिणाम है और यही मेरी शिक्षा की सफलता है। अपनी कन्या के विवाह के लिए मुझे धन की आवश्यकता नहीं थी। मैं तो एक ऐसे युवक को खोज रहा था जिसके पास शील, सदाचार और चरित्र का धन हो। मैंने उसे आज पा लिया। तू ही मेरी कन्या के लिए योग्य वर है।"

– *'जातक कथा'* से

प्रश्न

1. छात्रों के सामने आचार्य ने अपनी कौन-सी समस्या रखी ?
2. छात्रो ने उस समस्या का क्या समाधान सुझाया और आचार्य ने उसे स्वीकार क्यो नहीं किया ?
3. समस्या के हल के लिए आचार्य ने अपनी ओर से क्या सुझाव दिया ?
4. घर में सब कुछ होते हुए भी एक शिष्य आचार्य के लिए कुछ भी क्यों नहीं लाया ?
5. कुछ भी न ला सकने वाले शिष्य को ही आचार्य ने अपनी कन्या के लिए योग्य वर क्यो माना ?

2. अदल-बदल

होली की सुहावनी शाम थी। बच्चे मोहल्ले के बीच मे लगे नीम के पेड के नीचे इकट्ठे हुए थे। वे एक-दूसरे पर धूल उड़ा रहे थे और खेल रहे थे।

इतने मे वहॉ अमरत और इसब आ पहुॅचे। वे एक-दूसरे के कंधे पर हाथ रखे थे। दोनों ही नई कमीज और निकर पहने थे, एक ही आकार के, एक ही नाप के और उसी दिन सिलाए हुए। वे दोनो एक ही स्कूल मे जाते और एक ही कक्षा मे पढ़ते थे। दोनो के घर भी आमने-सामने थे।

अमरत और इसब के मॉ-बाप का व्यवसाय भी एक ही था, खेती का। स्थिति भी समान थी। बनिया पॉच बार मना करने पर एक बार कर्जा देता था।

सक्षेप मे, इन दोनो दोस्तों के बीच यदि कोई अतर था तो वह इतना ही कि अमरत की मॉ थी, पिताजी थे और तीन भाई थे। लेकिन इसब की माँ नहीं थी, भाई भी नहीं थे, केवल पिताजी थे।

इन दोनो दोस्तो को एक ही प्रकार के कपडो मे देखकर चबूतरे पर बैठे हुए दो-तीन लडके बोल उठे, "अरे ओ, अमरत-इसब, कहीं अदल-बदल न हो जाना।"

दूसरे लड़के को शरारत सूझी, "भाई लडकर तो दिखाओ। उसमें

भी दोनो बराबर हो या कम ज्यादा ?"

वहाँ पर खडे दूसरे लड़के भी बोल उठे, "हाँ, हाँ अमरत, ठीक तो है इसब ! देखें तो सही कौन जीतता है।"

पहला लड़का बोला, "यह लड़ाई कोई गुस्से में तो हो नही रही। वैसे ही लडना है।"

इसब ने अमरत की ओर देखा।

अमरत बोला, "ना भाई ना, मेरी माँ मुझे मार डालेगी।"

अमरत का भय ठीक ही था। घर से निकलते समय माँ ने चेतावनी दी थी, "देखो, ज़िद करके नए कपडे बनवाए हैं, अब कहीं फाड़े या गदे किए तो फिर देख लेना।"

बात सही थी। इसब ने कमीज़ और निकर सिलवाने के लिए दिए थे, यह सुनकर अमरत ने भी ज़िद की थी, "इसब जैसे कपड़े सिलवाओ तभी स्कूल जाऊँगा।"

माँ ने कहा था, "बेटा, इसब लता-पत्तो को बाँधता था इसलिए उसके कपड़े फट गए थे। तेरे तो अब भी ठीक हैं।"

"कहाँ ठीक हैं ? यह देखो ।" कहकर अमरत ने कमीज़ के एक छेद मे उँगली डालकर उसे और भी फाड़ डाला था।

तब माँ ने एक बात और कही, "इसब को उसके बाप ने कल ऊपर लटका कर कैसा मारा था ?' बेटे, उसे तो मार भी खानी पडती है और नए कपड़े भी उसी को मिलते हैं।"

लेकिन अमरत ऐसी बातों में असल बात को भूलने वाला नहीं

था, "तो फिर मुझे भी बाँध कर मारो। लेकिन मेरे लिए भी इसब जैसे कपड़े तो सिलवाने ही होंगे।"

"तो कहो अपने पिताजी से।" माँ ने जैसे अपने सिर से जिम्मेदारी उठाकर बाप पर डाल दी।

लेकिन माँ नहीं मानेगी तो पिताजी कैसे मानेंगे ? अमरत ने भी ज़िद नहीं छोड़ी। स्कूल नहीं गया, खाना नहीं खाया, रात को घर पर सोया तक नहीं।

फिर माँ ने अपने पति को समझाकर नए कपड़े सिलवाने की अनुमति ले ली। अमरत को इसब की गोशाला मे से ढूँढ़कर घर ले आई।

इन सबके बाद इसब की तरह सज-धज कर गाँव से निकला हुआ अमरत ऐसा काम कैसे कर सकता था जिससे उसके कपडो को कोई नुकसान हो ? और फिर वह लडाई भी इसब के साथ !

पर इतने में उस टोली से एक शरारती लड़का आगे निकलकर सीधा अमरत के पास गया। आते ही उसने अमरत के गले मे हाथ डालकर कहा, "तो फिर चल, हम दोनों लड़ते हैं।" और उसे खुली जगह मे खींच ले गया।

लेकिन अमरत लडना चाहता हो तभी उसको मारेगा ना ? वह तो उससे छूटने की कोशिश करने लगा, "छोड़ दो मुझे, छोड़ दो। मुझे नहीं लड़ना। देख ले कालिया, मना कर रहा हूँ ...।"

इतने में तो कालिया ने उसे ज़मीन पर पटक दिया। यह देखकर टोली के लड़के खुश हो गए और चिल्लाने लगे, "वाह-वाह, अमरत

हार गया। कालिया बहादुर है। जीत गया जीत गया ।"

यह देखते ही इसब को गुस्सा आ गया। वह कालिया को ललकार कर बोला, "आ जा, मेरे सामने आ जा।"

कालिया झिझक गया। पर दूसरे लडके उसका जोश बढ़ाने लगे। फिर तो दोनो की कुश्ती शुरू। दोनो ऐसे लड़े कि नीचे गिरा हुआ कालिया फूट-फूटकर रोने लगा।

दूसरे लडकों ने देखा कि हँसी-मजाक का खेल उलटा ही हो गया। उन्होने अमरत का बदला लेने के लिए गए हुए इसब के हाथ से कालिया को छुडवाया और फिर उसे रोता हुआ छोड़कर सारे लडके इधर-उधर खिसक गए। उनको डर था कालिया के मॉ-बाप से डॉट पिट जाने का।

अमरत इसब को लेकर भाग निकला। आगे चलकर इसब की फटी हुई कमीज की ओर उसका ध्यान गया। जेब के साथ डेढ बालिश्त लबा टुकडा लटक रहा था।

उसे देखते ही दोनों वहॉ के वहाँ ठिठक गए। आधी जीभ बाहर को निकल पडी। चारो भयभीत आँखे उस टुकडे पर जा चिपकीं, "अब?"

उस रोते हुए लड़के की आवाज सुनकर या और किसी कारण से इसब के बाप ने घर से आवाज़ लगाई, "अरे, ओ इसबा, कहॉ गया रे ?"

दोनों लडकों की धडकने मानो बोल रही थीं कि अब मारे गए। दोनों को निश्चित रूप से मालूम था कि कमीज़ का फटा टुकडा देखकर

इसब का पठान बाप उसकी चमडी के भी टुकडे-टुकडे कर देगा।

और नहीं तो क्या ! कितनी मिन्नते करने के बाद बनिया ने यह कपडा उधार दिया था।

फिर से आवाज़ सुनाई दी, "अबे कौन रोता है ? इसब कहाँ गया?"

दोनों लड़कों को शक हो गया कि शायद वह उसी ओर आ जाएँगे।

अचानक अमरत के दिमाग में बिजली कड़की। वह इसब को एक तरफ़ ले गया, "अरे आ तो सही !"

फिर दो घरो के बीच की सॅकरी गली मे जाकर अमरत अपनी कमीज निकालते हुए कहने लगा, "निकाल जल्दी निकाल . और यह ले, मेरी पहन ले।"
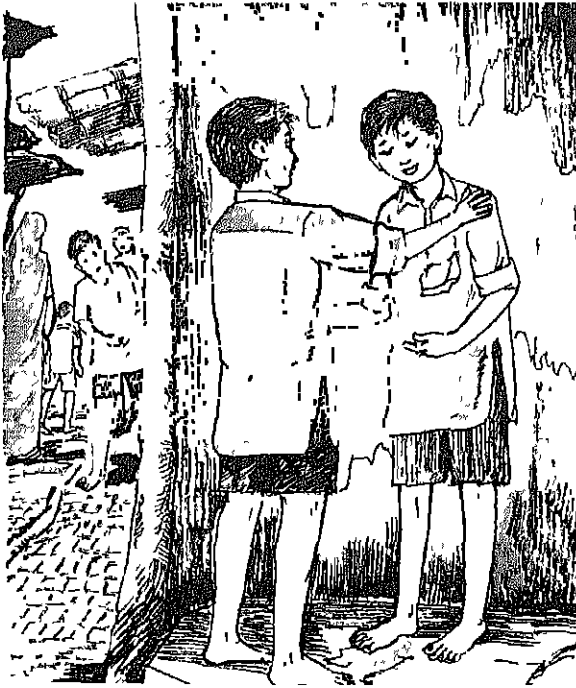
इसब तो भौंचक्का रह गया। बोला, "और तुम ?"

"मैं तेरी पहन लूँगा। अदल-बदल कर लेते हैं। जल्दी कर, कोई देख लेगा।"

इसब बटन खोलने लगा लेकिन उलझन मे भी पड़ गया। उसने पूछा, "अदल-बदल? लेकिन

तेरे पिताजी तुझे मारे बिना नहीं छोड़ेंगे।"

अमरत इसब की कमीज़ निकालने मे मदद करने लगा और बोला, "लेकिन मेरी तो माँ है न !"

बात सही थी। इसब ने कई बार देखा था, पिताजी की मार से बचने के लिए अमरत अपनी माॅ के पीछे छुप जाता था। हाँ, माँ से भी एक दो चपत मिल जाती थी, लेकिन वह तो इसब को गुड़ जैसी मीठी लगती थी।

फिर भी इसब इस अदल-बदल के लिए राजी न होता, लेकिन उसी समय बाहर कुछ आवाज़ हुई तो इसब ने झट से अपनी कमीज निकाल दी और दोनों ने एक-दूसरे की पहन ली। फिर दोनों गली में से बाहर निकले और डरते, सकुचाते अपने-अपने घर की ओर चलने लगे। अमरत का दिल तो डर के मारे ज़ोर-जोर से धड़कने लगा।

पर वह तो त्योहार का दिन था और वह भी होली की चहल-पहल वाला त्योहार। इसलिए अमरत की माँ ने अमरत के अपराध को थोड़ा-सा गुस्सा दिखाकर माफ़ कर दिया। सूई-धागा लेकर कमीज़ के फटे हुए हिस्से को भी सी दिया। इसके साथ ही दोनो बच्चों का वह डर और संकोच दूर हो गया।

दोनों दोस्त फिर से एक दूसरे के कंधों पर हाथ रखकर होली जलाने के लिए गाँव से बाहर निकल गए। दोनो के दिलो मे अपूर्व आनद था।

लेकिन इतने में किसी रहस्य जानने वाले लड़के ने उनके आनंद

को उड़ा दिया। ऑख मिचकाते हुए वह बोला, "क्यो ? अदल-बदल?"

अमरत और इसब समझ गए कि यह लडका ज़रूर देख गया है। दोनों वहॉ से खिसक गए।

अब तो सभी लड़के जान गए कि 'अदल-बदल' बोलने से ये चिढ़ते हैं तो वे जहॉ भी जाते थे वहाँ लड़के उन्हें चिढाते थे, "क्यों रे, अदल-बदल?"

बेचारे जाऍ भी कहॉ ? बच्चे उनके पीछे दौड़-दौड़ कर उन्हे छेड़ते रहे- अदल-बदल ! अदल-बदल !

सारा भंडा फूट जाने के डर से दोनो होली के स्थान से घर लौट आए।

ऑंगन मे चारपाई बिछाकर इसब के पिताजी हुक्का पी रहे थे। उन्होने दोनों बच्चो को अपने पास बुलाया और पूछा, "यूँ अलग-अलग क्यों घूम रहे हो ? आओ, यहॉ बैठो।"

इसब के पिताजी की इतनी मीठी आवाज़ सुनकर दोनो कॉप उठे। दोनों को लगा कि पिताजी को सही बात मालूम हो गई है, इसलिए इतने स्नेह का दिखावा कर रहे हैं।

इतने मे पठान बाप खड़ा हो गया और उठते ही उसने दस साल के अमरत को उठा लिया। फिर आवाज़ दी, "अरी वहाली भाभी, आज से तुम्हारा अमरत मेरा है।"

भाभी हँसते हुए आई और बोली, "हसन भैया, एक बेटा तो तुमसे सँभलता नहीं।"

"लेकिन आज से इक्कीस भी हो न, तो सँभाल लूँगा।" पठान का गला भर आया।

वहाली को आश्चर्य हुआ।

गला साफ़ करके, पठान ने दोनो बच्चो को उसी गली में जाते हुए देखा था, यह बात बताई और बोला, "मैंने सोचा, जाकर देखूँ तो बात क्या है?"

पठान को किस्सा सुनाते हुए देखकर मोहल्ले की और महिलाएँ भी इकट्ठी हो गई। लेकिन बात कोई लंबी नहीं थी। उसने कमीज़ निकालकर उसकी अदल-बदल की बात कही और बोला, "इसब ने पूछा कि तेरे पिताजी मारेगे तो ? लेकिन तुम्हारा अमरत क्या बोला जानती हो ? बोला कि मेरी तो मॉ है न ।"

पठान की फिर से ऑखे भर आई। उसने कहा, "सच कहता हूँ। इसकी इतनी-सी बात ने मेरा दिल साफ़ कर डाला, मेरा दिमाग ठिकाने पर ला दिया।" उसने इसब को प्यार से गले लगा लिया और उसकी पीठ दुलारते हुए बोला, "अब तुम्हें कभी अपनी अम्मी का अभाव महसूस नहीं होगा।"

मोहल्ले की महिलाऍ भी इन बच्चो का परस्पर प्रेम देखकर दग रह गई।

इतने मे होली जलाकर लौटते हुए बच्चों ने अमरत-इसब को देखा और छेडना शुरू कर दिया, "अमरत-इसब, अदल-बदल भाई अदल-बदल।"

लेकिन अब तो डरने की बात ही नहीं थी। अमरत और इसब उलटे खुश हुए।

अदल-बदल की बात सारे गाँव में फैल गई। होली जल रही थी, वहाँ भी वही बात। स्वय मुखिया ने ऐसे घोषणा की मानो नए नाम का खिताब दे रहा हो, "आज से अमरत का नाम अदल और इसब का नाम बदल रखा जाए।"

और इसके साथ ही गॉव के सारे बच्चे खुश हो गए। केवल गॉव ही नही गगन भी गूँज उठा, "अमरत-इसब, अदल-बदल। अदल-बदल भाई अदल-बदल।"

अनु वर्षा दास

प्रश्न

1. अमरत और इसब के पारिवारिक जीवन मे क्या असमानता थी ?
2 अमरत की मॉ अमरत के लिए इसब जैसे कपडे सिलवाने को क्यों तैयार हो गई ?
3. कालिया की जीत पर इसब को गुस्सा क्यो आया और उसका क्या परिणाम निकला ?
4 क्या तर्क देकर अमरत ने इसब को कमीज की अदल-बदल के लिए राजी कर लिया ?
5 अमरत और इसब का होली का आनद क्यो समाप्त हो गया ?
6 'अब तुम्हे कभी अपनी अम्मी का अभाव महसूस नही होगा।' इसब के पिता ने ऐसा क्यो कहा ?

3. कुत्ता और बाघ

एक मोटे ताज़े हट्टे-कट्टे पालतू कुत्ते के साथ एक बार दुबले-पतले शरीर वाले बाघ की मुलाकात हो गई। बातचीत के दौरान बाघ ने कहा, "एक बात पूछना चाहता हूँ भाई! तुम्हें बताना ही पड़ेगा कि कैसे और क्या खाकर तुम इतने ताकतवर और हट्टे-कट्टे बन गए हो ? तुम क्या खाते हो और किस तरह रोज की खुराक जुटा पाते हो? मैं तो दिन-रात खाना जुटाने की कोशिश कर-कर हार-सा जाता हूँ, फिर भी भरपेट खाना नहीं जुटता। किसी-किसी दिन तो भूखे पेट ही रह जाना पडता है। खाना न मिलने से ही मैं इतना कमज़ोर और दुबला हो गया हूँ।"

कुत्ते ने कहा, "जो मैं करता हूँ, वह अगर तुम भी कर सको तो मेरे जैसी ही तुम्हें भी खुराक मिल सकती है।"
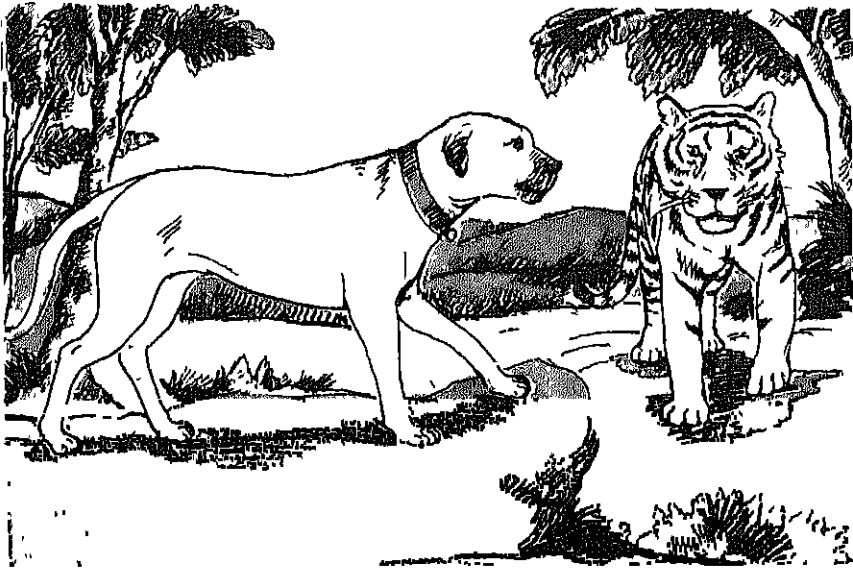
बाघ ने अचरज से पूछा, "सच कह रहे हो ? तो ठीक है भाई। पर बताओ तो सही तुम्हें इतने अच्छे खाने के लिए कौन-कौन से काम करने पड़ते हैं ?"

उस पालतू कुत्ते ने कहा, "करना क्या है ? कुछ भी तो नहीं। सिर्फ रातभर मालिक के घर की देख-रेख करनी पड़ती है।"

बाघ ने कहा, "बस इतना ही ! यह काम तो मैं भी कर सकता हूँ। आहार जुटाने के लिए, मैं जगल-जगल भटकता हूँ। सरदी, गरमी और बरसात मे कष्ट पाता हूँ। पर भाई अब यह कष्ट नहीं सहा जाता। अगर धूप, बारिश और सरदी मे एक छत मिल जाए और भूख के समय भरपेट खाना तो फिर जीवन में और क्या चाहिए ?"

बाघ के दु ख की बात सुनकर कुत्ते ने कहा, "तो मेरे साथ आओ। मैं अपने मालिक से कहकर तुम्हारा भी इतजाम करवा दूँगा।" यह सुनकर बाघ कुत्ते के पीछे-पीछे हो लिया।

चलते-चलते बाघ की नज़र एकाएक कुत्ते की गरदन पर पड़ी। उसने यों ही पूछा, "भाई तुम्हारी गरदन में यह निशान कैसा ?"

कुत्ते ने कहा, "कुछ भी तो नहीं।"

बाघ ने ज़िद की, "नहीं भाई यह तो तुम्हे बताना ही होगा कि तुम्हारी गरदन के रोएँ का रंग कैसे उड़ गया ? यह दाग आखिर पड़ा कैसे ?"

कुत्ते ने फिर कहा, "यह कुछ भी तो नहीं। लगता है तुम यह पट्टा बाँधने की वजह से गले पर पड़े दाग के बारे में पूछ रहे हो।"

बाघ ने पूछा, “गले में पट्टा ? यह कौन-सी चीज है ?” कुत्ते ने कहा “उसी गले के पट्टे वाली ज़ंजीर से तो दिन में मुझे बाँधकर रखा जाता है।”

यह सुनते ही बाघ चौंक उठा। उसने पूछा “तुम्हारा मालिक तुम्हें जंजीर से बाँधकर रखता है ? भला क्यों ? फिर तो तुम अपनी मर्ज़ी से कहीं आ-जा भी नहीं सकते ?”

कुत्ते ने कहा, नहीं ऐसी बात तो नहीं। दिन में मैं अवश्य बँधा हुआ रहता हूँ पर रात को जब मुझे खुला छोड़ा जाता है तो मेरी मर्ज़ी, मैं कहीं भी जाऊँ और फिर मालिक के नौकर-चाकर भी मुझे बहुत प्यार करते हैं। मेरी देखभाल करते हैं। मुझे अच्छे-से-अच्छा खाना देते हैं, मुझे नहलाते हैं। मालिक भी प्यार से मुझे कभी-कभी थपथपा देते हैं। स्वयं ही देख लो मैं कितना सुखी तथा आनंद में हूँ।”
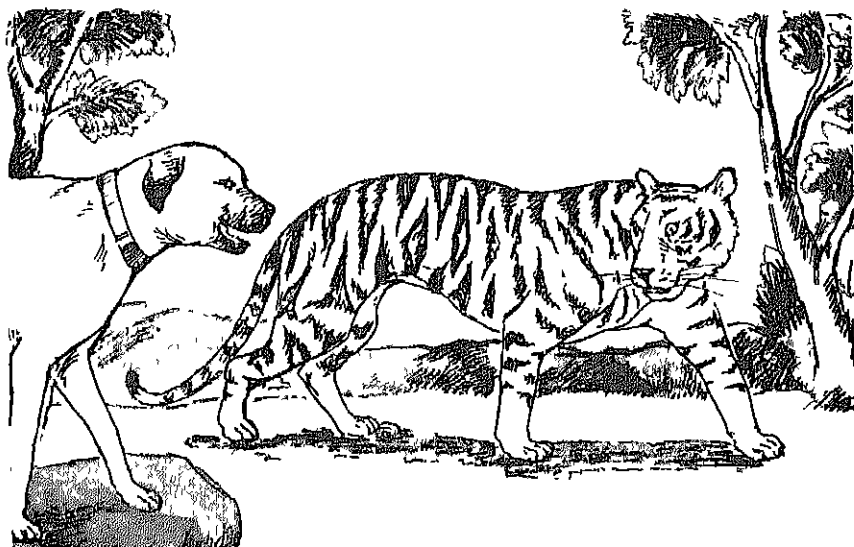
यह सब सुनकर बाघ ने कहा, "रे भाई, अपना यह सुख अपने ही पास रहने दो। मुझे इस तरह का सुख कतई मजूर नहीं। इस तरह दूसरे के अधीन रहकर राज-भोग, राज-सुख से कही अधिक बेहतर है खाना न खाना। भोजन न जुटा पाने का कष्ट तो इस कष्ट से सौ गुना अच्छा है। बुरा मत मानना मैं तुम्हारे साथ नहीं जा सकता।"

इतना कहकर बाघ दूसरी तरफ़ मुँह घुमाकर जगल की तरफ़ चल दिया।

अनु देवलीना केजरीवाल

प्रश्न

1. बाघ ने कुत्ते को अपने दुबले होने का क्या कारण बताया ?
2. कुत्ते ने बाघ को भरपेट खुराक पाने का क्या उपाय बताया ?
3. कुत्ते की बात को सुनकर बाघ क्यो चौंक उठा ?
4. 'रे भाई, अपना यह सुख अपने ही पास रहने दो। मुझे इस तरह का सुख कतई मजूर नहीं।' बाघ के इस कथन से हमे क्या संदेश मिलता है ?

4. विशेष पुरस्कार

"उफ़, कितना दुष्ट है यह लड़का ! इसे पीटकर सीधा किए बगैर नहीं चलेगा। लड़कों के साथ इसके लड़ने-झगडने की कई वारदातें मैं सुन चुका हूँ।" हेडमास्टर ने अपने आपसे कहा और चौकीदार मोहन को ऊँची आवाज़ मे पुकारा, "मोहन, मोहन !"

हेडमास्टर के गरजने की आवाज़ से ही मोहन समझ गया कि उनका पारा चढा हुआ है। तीन छलॉगो मे वह कमरे से बाहर निकल आया और हेडमास्टर के पास पहुँचकर उसने सहमते हुए पूछा, "जी सर !"

"तुरत जाकर पाँचवीं कक्षा के तपन को बुला ला।" हेडमास्टर ने आदेश दिया।

मोहन एकदम कमरे से निकल गया।

यहाँ तपन का ज़रा परिचय दे दिया जाए। तपन पदुमनि गाँव के किरानी का मँझला लड़का था। छरहरे कद का होने पर भी बड़ा बलिष्ठ। रंग साँवला, बडी-बड़ी आँखें, फुरतीला, साथ ही पढ़ने-लिखने मे भी तेज़। मगर क्या घर, क्या बाहर, उसके उपद्रवों की कोई सीमा नहीं। बेकार की बातों मे उलझने में माहिर। घर के लोग भी उससे आतंकित रहते। वह पहले या बिना कारण किसी को परेशान नहीं करता था, किसी से झगड़ा-टंटा नहीं करता था। पर अगर कोई उससे उलझे या चिढ़ा दे तो बस, फिर उसकी खैर नहीं। हम उम्र लड़कों

का तो वह सरदार ही था। किसी को कोई बेवजह मारे या गाली दे दे तो उसे बता देना भर काफी था। उसे वह बिलकुल ठीक करके ही छोड़ता। यूँ कहा जाए तो वह सही मायने मे बेसहारों का सहारा था। इसी कारण उसके साथी लड़के जहाँ उसे पसद करते, वहीं उससे डरते भी थे।

गाँव के प्राथमिक स्कूल की आखिरी परीक्षा पास करने के बाद वह पंद्रह मील दूर अपने मामा के यहाँ चला गया था और वहाँ के हाई स्कूल मे सिर्फ़ सालभर पढ़ने के बाद फिर घर लौट आया और गाँव से डेढ मील दूर के ज्ञानपीठ हाई स्कूल में भरती हो गया।

इस हाई स्कूल में उसे आए अभी सिर्फ़ एक माह हुआ था। इसी बीच उसकी शिकायतें आने लगीं। पदुमनि गाँव के ही व्यापारी हरेन महाजन ने तपन के खिलाफ़ हेडमास्टर से फ़रियाद की। हेडमास्टर को

दी गई अपनी अर्जी मे उसने लिखा था – कल बदमाश तपन ने लडको के झुड के साथ बिना कारण उसकी दुकान पर पत्थर बरसाए और उसके उकसाने पर दूसरे लडको ने दुकान में घुसकर गडबड़ी की। इसलिए हेडमास्टर साहब इसका उचित फ़ैसला कर दे।

चौकीदार के साथ तपन आया और डरता हुआ हेडमास्टर की ओर नज़र डाल, सिर झुकाकर खड़ा हो गया। हेडमास्टर ने हाथ मे पकडी हुई बेंत हिलाते हुए कहा, "ऐ लडके, तेरा ही नाम तपन है ?"

"जी सर !" तपन ने विनम्रता से जवाब दिया।

"हूँ ! तू इस सज्जन को पहचानता है ?" पास खड़े हरेन महाजन की ओर उँगली से इशारा करते हुए हेडमास्टर ने तपन से पूछा।

"जी, इनका घर तो हमारे गाँव में ही है।" तपन ने पहले जैसे विनम्र भाव से ही जवाब दिया।

"हूँ ! ठीक है। कल शाम को लडको की टोली ले जाकर तूने इनकी दुकान पर पत्थर क्यो फेके थे ? सच-सच बता। नहीं तो बेंत मार-मारकर तेरी चमड़ी उधेड दूँगा।" हेडमास्टर ने आँखें तरेर कर पूछा।

"जी सर, बंलू आदि के साथ इनकी दुकान पर मैंने पत्थर फेंके थे, यह सच है।" तपन बोला।

"क्यो फेके थे पत्थर ? बदमाश कहीं का, बता ?" हेडमास्टर ने डाँटा।

"सर, चीज़ें बेचते समय यह आदमी ग्राहकों को ठगा करता है।

कीमत भी ज़्यादा लेता है, तौल में भी कम देता है। इसने कागज के ऐसे थैले बनवाए हैं जिनकी पेंदी मे मोटी-मोटी दफ़्ती लगी रहती है। ऐसे थैले बनाने के लिए मोटी-मोटी दफ़्तियाँ मँगवा रखी हैं सर, परसों सवेरे इसके यहाँ से एक किलो दाल ली थी। घर लाकर तौली तो सिर्फ़ आठ सौ ग्राम दाल निकली। थैले को फाडकर उसकी दफ़्ती तौलने पर पाया कि वह पचास ग्राम की थी। शेष डेढ़ सौ ग्राम इसने तौल मे कम दिया था। गाँव के सभी लोग इसके बारे में कहा-सुना करते हैं। मैंने जब कल शाम को इससे दाल कम देने की शिकायत की तो इसने मुझे उलटे गालियाँ देकर दुकान से भगा दिया था सर ! इसी कारण मैंने लड़कों को साथ लेकर इसकी दुकान पर पत्थर फेंके थे।" तपन ने कहा।

हेडमास्टर ने हरेन महाजन के चेहरे पर नज़र डाली। उसका चेहरा स्याह पड गया था। हेडमास्टर ने कुछ सोचा। फिर तपन की ओर देखकर बोले, "जो भी हो, तूने यह काम अच्छा नहीं किया, किसी के यहाँ जाकर यो उपद्रव करना बड़ी बुरी बात है। अगर महाजन ने बुरा काम किया है तो उसका फ़ैसला सरकार या और लोग करेंगे। तुझे क्या पड़ी थी ? आ, हाथ फैला।"

एक-एक कर पाँच बेत खाकर तपन कुछ देर के बाद कमरे से निकल गया। उसकी कक्षा के लड़के उसको देखकर व्यग्य करते हुए हँस रहे थे। दो-एक ने आवाज़ें भी कसीं।

कुछ दिन बाद एक और घटना हो गई। एक उद्दंड साँड के उपद्रवो

के मारे वहॉ के बहुत से लोगों की नाक मे दम हो गया था। कई लोगो को सींग मारकर उसने घायल कर दिया था। अगर कोई लकड़ी या डंडा लेकर आगे बढ़ता तो वह साँड़ तनकर उसकी ओर दौड पड़ता। साँड़ की वह रुद्र मूर्ति देखकर उसके सामने जाने की हिम्मत भला कौन कर सकता था। सॉड़ के उपद्रवो से तपन के मन में उसके प्रति एक होड़ की भावना जाग उठी थी। उसने मन-ही-मन कहा – ठहरो बच्चू, तुम्हे मैं सीधा करके ही छोड़ूँगा।

कुछ सोच-विचार कर उस दिन विराम की घंटी मे वह कहीं से एक रस्सी और एक सीटी ले आया था। चुपके से साँड़ के पास पहुँचकर मौके से न जाने कब और कैसे अचानक कूदकर उसकी पीठ पर सवार हो गया और घोड़े की भाँति साँड के मुँह में रस्सी की लगाम लगा दी। सॉड़ पहले तो समझ ही नहीं पाया था। लेकिन जैसे ही पता चला कि उसकी पीठ पर शासन करने वाला कोई आदमी सवार है, तो उसका धीरज टूट गया। बात समझ में आते ही कूद-फाँद कर, हिल-डुलकर, दौड़-धूप कर कैसे भी हो, उसे नीचे गिरा देने की वह कोशिश करने लगा।

उधर स्कूल में पाँचवीं घंटी की पढ़ाई शुरू हो गई थी। मगर तपन का तो उधर ध्यान ही नहीं था। वह तो साँड़ को वश में करने में जुटा हुआ था। साँड की उछल-कूद के बावजूद तपन अपने को सँभाले हुए उसकी पीठ पर लगाम पकड़े रहा। एक बार लगाम खींचकर तपन ने सॉड की पीठ पर दो-चार डंडे जमा दिए तो साँड बिलकुल मतवाला-सा

हो उठा। वह स्कूल की चहारदीवारी के अदर घुस आया और सातवीं कक्षा मे घुस कर इधर-उधर दौडने लगा। अचानक एक ऐसी चिंतनीय घटना देखकर उस कक्षा के शिक्षक और छात्रो के होश-हवास गुम हो गए। भगदड मच गई। जिसे जिधर जगह मिली, उधर भागा। धक्कम-धक्का, ठेलम-ठेल मे कौन किस पर गिरा, कोई ठिकाना न रहा। शिक्षक रजनी चहरिया भी किसी तरह दौडते हुए बाहर निकल कर ही बच पाए। सॉड की कूद-फाँद से स्कूल के दरवाज़े-खिडकियो के बहुत-से शीशे टूट गए। वहॉ भी कोई चारा न पाकर सॉड़ हॅकडता हुआ बाहर दौडा और स्कूल के मैदान में धम्म से गिर पडा। तपन अपने को किसी तरह बचा पाया और कूदकर दूर जा पडा। सॉंड़ खडा होकर डर के मारे पीछे की ओर देखे बगैर तेज़ी से भागा . बिलकुल हवा-सी दौड, . दौडते-दौडते वह स्कूल की चहारदीवारी से दूर निकल गया।

हेडमास्टर के पास तपन के खिलाफ़ फिर मामला आया। मामला लाने वाले थे खुद रजनी मास्टर। सॉड़ के सबंध मे तपन की शिकायत पाते ही हेडमास्टर आग-बबूला हो उठे। हरेन महाजन वाली और बीच-बीच मे दूसरे लडको की छोटी-मोटी घटनाऍ याद आ जाने के कारण उनका मन और भी कडवा हो उठा था। इस उत्पाती लडके की करतूतों के कारण ही आज स्कूल के शिक्षक और छात्रो की ऐसी दुर्गति हुई और स्कूल का नुकसान भी हुआ। यह सोचकर हेडमास्टर ने तुरत तपन को बुला लाने के लिए चौकीदार मोहन को भेज दिया।

क्षण भर बाद ही मोहन के साथ तपन डरते-डरते हेडमास्टर के सामने आया। तपन को देखते ही हेडमास्टर ने दाँत पीसते हुए बेंत हिला-हिला कर कहा, “अरे बदमाश, आज तूने उस साँड़ को कक्षा में क्यो घुसा दिया था ? बता, जल्दी बता, नहीं तो ..”

“सर, मैंने जान-बूझकर साँड़ को कक्षा में नहीं घुसाया। मैं उसकी पीठ पर चढ़कर उसे वश में करना चाहता था, तभी वह दौडकर कक्षा में घुस गया था। सिर झुकाकर तपन ने जवाब दिया।

“भला तू क्लास छोड़कर साँड़ की पीठ पर चढ़ने क्यों गया था? तुझे क्या पडी थी ? तो ले, हाथ फैला।”

हथेली पर हेडमास्टर की बेंत की पंद्रह चोटे झेलकर तपन अपनी कक्षा में आया। घृणा और व्यंग्य की हँसी से उसकी कक्षा के लडको ने उसका स्वागत किया। इस घटना के बाद तपन समूचे स्कूल मे एक बुरे लड़के के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

कुछ ही देर बाद हर कक्षा में हेडमास्टर की सूचना आई। सूचना में लिखा था– पाँचवीं कक्षा के छात्र तपन ने एक साँड़ को सातवीं कक्षा मे घुसाकर शिक्षक और छात्रों की दुर्गति की है तथा स्कूल के शीशे तोड़े हैं। इस अपराध के कारण उसे पंद्रह बेंत लगाई गई हैं और क्षति-पूर्ति के रूप में उस पर पच्चीस रुपए का जुर्माना किया गया है। भविष्य में ऐसा काम करने पर उसे स्कूल से निकाल दिया जाएगा। सूचना पाकर कुछ लड़कों ने मुँह टेढ़ा कर तपन की ओर देखा और कुछ ने उसकी हँसी उड़ाई।

उसी दिन शाम को हेडमास्टर स्कूल से लौटकर पदुमनि गाँव की तरफ़ घूमने निकले। बीच-बीच में वे योही टहला करते थे। गाँव से वापस लौटते समय स्कूल के उस बदमाश लड़के तपन की एक और करतूत देख वे विस्मित हो उठे। एक भिखारिन की भीख माँगने की टोकरी अपने सिर पर लिए तथा एक हाथ से उस भिखारिन बुढ़िया को पकड़े तपन चला जा रहा था। कुछ दूरी पर उसी की कक्षा का एक लड़का नरेन और दूसरा महेश, उस बुढ़िया की टोकरी सिर पर रखने के कारण तपन की हँसी उड़ाते आ रहे थे।

बात यह थी कि गाँव से भीख माँगकर लौटते हुए उस बुढ़िया को ज़ोरो का बुखार चढ़ आया था। टोकरी लेकर चलना तो दूर, उसे खुद कदम बढाना भी मुश्किल हो गया था। बुढिया की ऐसी बुरी हालत देखकर तपन के मन मे बड़ी वेदना हुई। उसने तुरंत टोकरी को अपने

सिर पर ले लिया और कहा, "बूढी दादी, मेरा हाथ पकड़कर चली चलो।" और बुढिया को हाथ से पकडे वह उसके घर की ओर चल पड़ा था।

हेडमास्टर को आते देखकर नरेन और महेश ने उन्हें नमस्ते किया और तपन की ओर देखते हुए व्यंग्य से हँस दिए। मतलब, तपन की करतूत अब हेडमास्टर महोदय खुद ही देख लें। हेडमास्टर ने बात का पता लगाने के लिए बुढ़िया से पूछा। बुढ़िया ने बुखार से काँपते हुए सारी बाते बता दीं। तपन की ओर उँगली दिखाकर उसने कहा, "बाबा, यह बच्चा अगर न होता तो आज मुझे इसी सडक के किनारे पड़े रहना पडता। भगवान इस लाल का भला करे। उन दोनो लड़को ने भी मेरी हालत देखी थी, मगर मदद करना तो दूर, उलटे मेरी मदद करने वाले इस बच्चे की ही खिल्ली उड़ाते आ रहे हैं। कैसे निर्दयी हैं ये!" कहती हुई बुढ़िया थकावट के मारे हाँफने लगी।

सारी बाते समझकर हेडमास्टर ने नरेन और महेश को डाँटकर वहाँ से भगा दिया और बुढ़िया को उसके घर पहुँचा देने के लिए तपन से कहकर उन्होंने अपनी राह ली।

इसके दो हफ़्ते बाद। हेडमास्टर उस दिन मधुकुछि गाँव से टहलते हुए घर की ओर लौट रहे थे। राह में एक दृश्य देखकर वे दग रह गए। उन्होंने देखा – उस उपद्रवी साँड की एक टाँग किसी ने तोड़ डाली है। तपन उसे पकडकर कपड़े की पट्टी बाँध, कुछ जंगली पौधों का रस निचोड कर उस पर डाल रहा है। उसकी आँखें भरी

हुई हैं। हेडमास्टर जब वहॉ आकर खडे हुए तो वह चौंक-सा गया और उसने दोनो हाथ जोड़कर उन्हे प्रणाम किया। हेडमास्टर ने तपन की ऑखो की ओर देखते हुए पूछा, "तपन तू यहाँ क्या कर रहा है?"

"सर, किसी दुष्ट लडके ने इस बेचारे की एक टॉग तोड़ डाली है। इसे बडी तकलीफ़ हो रही है। सर, अनबोला जीव है, इसी कारण आदमी जैसी चीख-पुकार नहीं मचा पाता। अनबोले जीव को इस तरह से तकलीफ़ देना बुरा है, सर!" तपन ने बडे दुखी मन से हेडमास्टर से कहा।

"अरे, तूने तो इसी सॉड़ को 'बड़ा दुष्ट है' कहकर उस दिन लगाम लगाकर दौडाया था ? फिर आज यह तेरे लिए इतना भला कैसे हो गया ?"

"सर, पहले यह दुष्ट था, यह सच है। मगर जिस दिन मैंने लगाम लगाई थी, उसी दिन से यह सुधर गया था। आदमी को मारना तो दूर, आदमी को देखते ही डर के मारे राह से हट जाता था। सर, ऐसी हालत मे बेचारे को यों मारना उचित न था। इसे बडी तकलीफ़ हो रही है। इसी कारण, मैं इसका घाव धोकर, जगली पत्तियों का रस निचोडकर पट्टी बाँध रहा हूँ। पिताजी ने बताया था, ये जंगली पत्तियॉ घाव की अच्छी दवा हैं।" तपन ने जवाब दिया।

सॉड़ की तकलीफ़ से उसका मन भी भारी था, ऑखे डबडबाई हुई थीं। हेडमास्टर ने क्षण भर कुछ सोचा। इसके बाद तपन के चेहरे की ओर देखते हुए प्यार से उसके गालों को सहलाया। कुछ कहा नहीं।

वहाँ से वे घर की ओर चल पडे। उनकी आँखे भी भर आई थीं। सॉड़ के लिए नहीं, तपन के लिए।

ज्ञानपीठ हाई स्कूल में पुरस्कार वितरण समारोह का दिन था। दो बजे से सभा का आयोजन था। गुवाहाटी के किसी कॉलेज के अध्यक्ष को सभा की अध्यक्षता करने के लिए आमन्त्रित किया गया था। हेडमास्टर रवीन बरुआ ने इस बार अन्य पुरस्कारो के अलावा एक विशेष पुरस्कार भी देने की व्यवस्था की थी। घोषणा कर दी गई थी– स्कूल के सबसे उत्तम चरित्रवान लडके को यह पुरस्कार दिया जाएगा। वह पुरस्कार महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और लालबहादुर शास्त्री के जीवन चरित्र की तीन पुस्तको के रूप में दिया जाने वाला था।

दस बजे स्कूल लगा। इस नए पुरस्कार के बारे में भी सभी कक्षाओ के लडके आपस मे चर्चा कर रहे थे। पाँचवीं कक्षा मे नरेन तपन की ओर सकेत करता हुआ व्यंग्य से हॅस रहा था। उसने ऊँची आवाज़ मे पास बैठे भवेश से कहा, "सुना है, भवेश ! इस बार हमारे स्कूल मे उत्तम चरित्र के लिए जिस पुरस्कार की घोषणा की गई है, वह हमारी कक्षा के तपन को मिलने वाला है।" यह सुनते ही कक्षा के सभी लड़के खिलखिलाकर हॅस पड़े। शर्म और अपमान से तपन का चेहरा स्याह हो गया। फिर भी वह सिर झुकाए चुप ही रहा।

सभा आरभ हुई। अध्यक्ष के आसन ग्रहण करने के बाद सचिव ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। फिर लड़के-लड़कियो के नृत्य-गीत, कविता-पाठ आदि कार्यक्रम हुए। उपस्थित सज्जनो की ओर से दो-चार व्यक्तियो

ने भाषण दिए। अध्यक्ष के भाषण के पश्चात् पुरस्कार वितरण आरभ हुआ। विभिन्न विषयो मे कई छात्र-छात्राओ को पुरस्कार मिले। लोगो की तालियो के बीच तथा अध्यक्ष के हाथों पुरस्कार प्राप्त कर सबने गौरव का अनुभव किया। अब नया विशेष पुरस्कार देने की बारी आई। उपस्थित लोगों की ऑखो में उत्सुकता छाई हुई थी। वह विद्‌यार्थी भला है कौन, जो पाँच सौ से अधिक छात्र-छात्राओ मे अपने को सबसे चरित्रवान छात्र के रूप मे ला सकता है। तभी हेडमास्टर ने अध्यक्ष और उपस्थित्त सज्जनो को सबोधित करते हुए कहा, "माननीय अध्यक्ष महोदय एव सज्जन वृद, अब हमारे स्कूल के सबसे चरित्रवान छात्र को विशेष पुरस्कार देने की बारी है। वह पुरस्कार पॉचवी कक्षा के विद्‌यार्थी श्री तपन कुमार हजारिका को देना तय हुआ है।

हेडमास्टर की घोषणा सुनते ही वहाँ उपस्थित स्कूल के इक्कीस
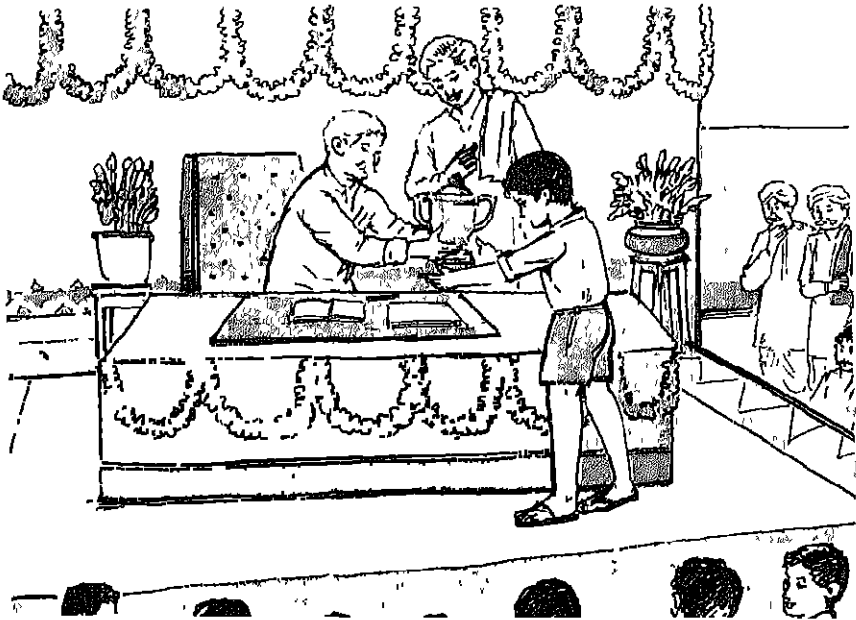
शिक्षको और पॉच सौ से अधिक छात्रो की ज़बान पर ताला पड गया। नरेन और भवेश के चेहरे ऐसे स्याह हो गए मानो किसी ने उनपर बोतल भर काली स्याही उड़ेल दी हो।

हेडमास्टर की जबान से अपना नाम सुनकर तपन को पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ था। इसीलिए घोषणा सुनकर भी पुरस्कार लेने के लिए उठकर जाने की हिम्मत उसमें नही थी। जब हेडमास्टर ने फिर से 'तपन कुमार हजारिका पाँचवीं कक्षा, कहकर पुकारा तो उसे लगा, जैसे उसके सिर मे चक्कर आ गया हो। स्कूल मे जो 'सबसे बुरे लड़के' के रूप में चर्चित है, भला उसे ही क्यों आज उत्तम चरित्रवान छात्र का पुरस्कार देने के लिए पुकारा जा रहा है ? किसी तरह उठकर वह अध्यक्ष के पास गया। उन्हे प्रणाम कर उसने हाथ बढ़ाया और पुरस्कार ग्रहण किया।

पुरस्कार प्रदान करने के बाद हेडमास्टर ने वर्णन किया कि तपन ने किस प्रकार उस बुढ़िया भिखारिन की मदद की थी और किस तरह से बेज़बान जीव उस साँड़ की सेवा की थी। फिर खुश होकर उन्होंने अपनी ओर से भी तपन को पाँच रुपया पुरस्कार दिया।

तालियो से सभा गूँज उठी। तपन की आँखों में खुशी के आँसू छलक आए।

अनु नवारुण वर्मा

प्रश्न

1 तपन के साथी उसे क्यो पसंद करते थे ?

2. किन उत्पातो के कारण हेडमास्टर तपन से क्रुद्ध हुए ?

3. तपन के बारे मे हेडमास्टर के विचार क्यो बदल गए ?

4. किन घटनाओ के कारण विशेष पुरस्कार हेतु तपन का चयन किया गया?

5 तपन के चरित्र की किन विशेषताओ ने आपको प्रभावित किया और क्यो?

5. एक फूल

देवकांत को काशी छोड़कर अमृतसर आए कुछ ही अरसा हुआ था। इस बीच उन्होंने शहर का कोना-कोना झाँक लिया।

तब भारत आजाद नहीं हुआ था। देवकांत भी अन्य युवको की तरह आजादी की लडाई मे कूद पडे थे। वह एक क्रांतिकारी दल में शामिल हो गए। क्रांतिकारियो की धर-पकड शुरू हुई तो देवकात ने वेश बदला। नकली दाढ़ी-मूँछ लगाई। फिर अपनी सात वर्ष की बेटी गौरी का हाथ पकडकर अमृतसर आ गए। शहर के मशहूर वकील सोमेश बाबू उनके मित्र और सहपाठी थे। सीधे उन्हीं के यहाँ पहुँचे। सोमेश और उनकी पत्नी माया भाभी ने उनका खूब स्वागत किया। सोमेश बोले, "तुम जब तक चाहो, रहो। यहाँ पुलिस तुम्हारा सुराग नहीं पा सकती। हाँ, थोडी दाढ़ी बढा लो, तो अच्छा है।"

देवकांत के मन का बोझ उतर गया। लेकिन इससे भी बड़ी खुशी उन्हे यह देखकर हुई कि गौरी जो गुमसुम और उदास रहती थी, यहाँ आकर खुश है। असल में सोमेश बाबू की भी छोटी बेटी थी, राधा। बडी ही चचल, हँसमुख। गौरी से दो वर्ष बड़ी थी। उसने आते ही गौरी को गप्पो में लगा लिया। दोनों पक्की सहेलियाँ बन गई थीं।

अक्सर देवकांत सुबह-सुबह नाश्ता करके निकलते। रात को देर से लौटते। वकील साहब भी अपने कामों में व्यस्त रहते थे। राधा

और गौरी दिन भर साथ-साथ खेलतीं, बातें करतीं। एक दिन राधा ने बातो-बातो मे गौरी से कहा, "गौरी, तुझे पता है ? हमारे शहर में बापू जी आ रहे हैं महात्मा गांधी।"

"सचमुच !" गौरी की आँखों में चमक आ गई।

"हाँ, स्कूल मे मास्टरजी ने बताया है। परसों आएँगे वह ... रेलगाड़ी से। हज़ारो लोग उनके दर्शन करने जाएँगे।" राधा ने बताया। गौरी बोली, "तब तो मैं भी उनके दर्शन करने जाऊँगी। पिताजी बता रहे थे, वह बच्चों को बहुत प्यार करते हैं।"

"पर वह तो चदा इकट्ठा करने आ रहे हैं न ! आज़ादी की लड़ाई के लिए। तू भला क्या देगी उन्हे ?" राधा ने पूछा।

गौरी को देवकात ने कुछ दिन पहले एक इकन्नी दी थी। गौरी ने अभी तक उसे सँभालकर रखा हुआ था। उदास होकर बोली, "मेरे

पास तो यही एक इकन्नी है .."

राधा हँसी । बोली, "तू तो ऐसे कह रही है, जैसे बापू तेरे हाथ से पैसे ले ही लेंगे। अरी पगली, बड़े-बड़े लोग आएँगे वहाँ। इतनी भीड़ में भला कोई पास जाने देगा तुझे ?"

गौरी बोली, "अपने पिताजी के साथ जाऊँगी मैं। गांधी जी खूब अच्छी तरह जानते हैं उन्हे।"

अब राधा गंभीर हो गई। बोली, "ठहर, मैं अपनी गुल्लक लाती हूँ। कुछ पैसे होंगे उसमें।"

राधा ने अपनी गुल्लक से पैसे निकाले। साढ़े चार आने थे। उसने वे पैसे गौरी को दे दिए। बोली, "इन्हें भी रख ले। ये मेरी ओर से बापू को दे देना।"

गौरी बोली, "कुल साढे पाँच आने हो गए। इतने थोड़े पैसे देना क्या अच्छा लगेगा? इससे तो अच्छा है, कुछ फल ले लूँ।"

"वाह, खूब मज़ेदार रहेगा।" राधा ने कहा। फिर दोनों सहेलियाँ देर तक बाते करती रहीं।

उस रात देवकांत लौटे तो गौरी ने कहा, "पिताजी, बापू आ रहे हैं. परसों। आप मुझे उनसे मिलवाने ले चलेंगे न !"

सुनते ही देवकात का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। गांधी जी के आने का उन्हें भी पता चल गया था। पर वह अभी उनसे मिलना नहीं चाहते थे। जानते थे, पुलिस उनके पीछे पड़ी है। कुछ देर चुप रहकर बोले, "अभी नहीं बेटी ! .... कुछ जरूरी काम है ......।"

पर बेटी की जिद थी। देवकांत इनकार न कर सके। उन्होने हाँमी भर ली।

जिस दिन महात्मा गांधी को आना था, सुबह से ही प्लेटफ़ार्म पर भीड होने लगी थी। सभी उनके दर्शन करना चाहते थे। देवकात भी एक ओर खड़े थे। गौरी उनके कधे पर बैठी थी। उसके हाथ में एक छोटी-सी टोकरी थी, जिसमे केले, संतरे और चीकू थे। लोगो का उत्साह फूटा पड रहा था। वे महात्मा गांधी की जयजयकार कर रहे थे।'भारत माता की जय' के नारे लगा रहे थे।

इतने मे गाड़ी के आने की सूचना मिली। गाड़ी आकर रुकी, तो लोग उस डिब्बे की ओर दौडे जिसमे गांधी जी बैठे थे। गाधी जी उस समय पुस्तक पढ़ रहे थे। उनका ध्यान किताब पढ़ने मे था। एक हाथ उन्होने बाहर निकाला हुआ था। लोग जो भी चंदा देते, उसे लेकर वह भीतर रखे थैले मे डाल देते, फिर हाथ बाहर निकाल देते।

देखते ही देखते बहुत-सी महिलाओं ने अपने गहने उतारकर दे दिए। सिक्के और नोटो की तो कमी ही न थी। लोगो का उत्साह देखते ही बनता था। न जाने कब गौरी देवकात के कधे से उतरी। भीड मे होती हुई गांधी जी के पास पहुँच गई। बोली, "बापू ... देखिए मैं आपके लिए क्या लाई हूँ ?"

बापू ने किताब एक ओर हटाई। मुसकराकर कहा, "तो लाओ न!"

"ऐसे नहीं बापू ! पहले आप बाहर आइए," गौरी ने इठलाकर कहा।

गाधी जी ने किताब नीचे रखी और हँसते हुए बाहर आ गए।

उन्होने गौरी को पास बुला लिया। उससे बाते करने लगे। आसपास लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई। देवकांत भी तब तक आ गए थे। "बापू ...बापू .. ये मेरे पिता जी हैं।" गौरी ने कहा।

गांधी जी ने देखा, तो देवकांत की शकल उन्हें कुछ-कुछ पहचानी लगी। देवकांत बोले, "आपके आश्रम में आपसे मिल चुका हूँ। आपके कई पत्र भी मेरे पास ..."

"देवकांत !" गांधी जी के होंठों से बरबस निकला। दाढ़ी बढ़ी होने के बावजूद वह देवकांत को पहचान गए थे।

गौरी ने टोकरी बापू की ओर बढ़ा दी। बोली, "बापू, आपको भूख लगी होगी। ये फल आपके लिए लाई हूँ, खा लीजिए न !"

बापू ने टोकरी रख ली। फिर गंभीर होकर कहा, "लेकिन मेरी भी एक शर्त है।"
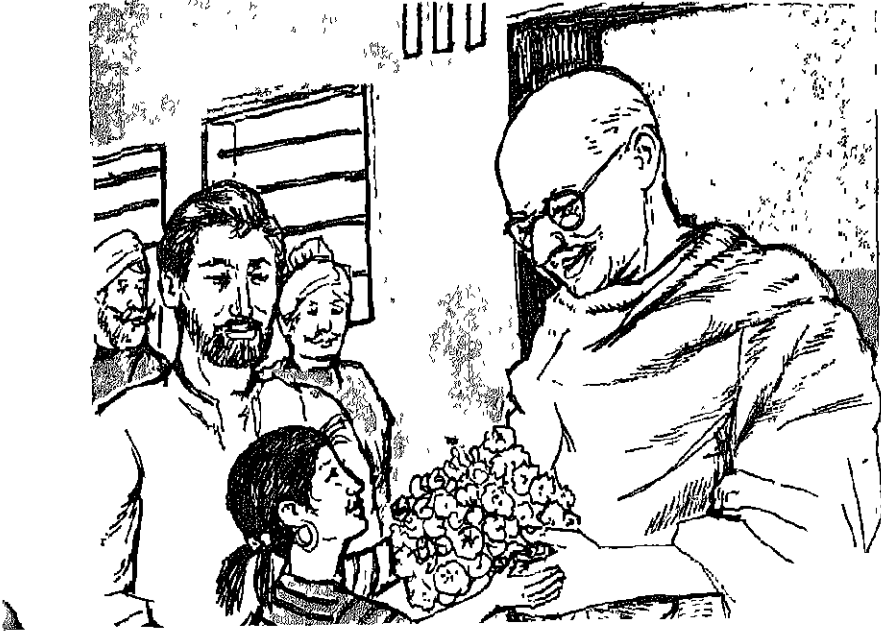
"वह क्या ?" गौरी अचकचाई।

"वह यह कि बच्चो की चीजे मैं मुफ़्त मे नहीं लेता। बदले मे तुम्हे भी कुछ लेना पडेगा।" गाधी जी ने हॅसते हुए कहा। फिर वह अदर गए। टोकरी एक तरफ रख दी। रेलगाड़ी के डिब्बे मे फूल मालाओ का ढेर था। वह झट दोनो हाथो मे कुछ मालाएँ उठाकर लाए। गौरी को पकड़कर कहा, "ये तुम्हारे लिए।"

गौरी का चेहरा खिल उठा। जैसे दुनिया का अकूत खज़ाना मिल गया हो। देवकात भी मंद-मंद मुसकरा रहे थे। इतने मे गाड़ी चल दी।

देवकात ने कहा, "गौरी, ये फूल अनमोल हैं। सॅभालकर रखना।"

धीरे-धीरे भीड छँटने लगी। गौरी पिता की उँगली पकड़ कर चल रही थी। अभी वे प्लेटफ़ार्म से उतरे ही थे कि एकाएक पुलिस के पॉच-सात सिपाही देवकात की ओर बढे। बोले, "मि देवकात आपको गिरफ़्तार किया जाता है।"

देवकात जिस आशका से घबरा रहे थे, वही हुआ। प्लेटफ़ार्म पर चप्पे-चप्पे पर सरकार के गुप्तचर थे। जब गांधीजी ने देवकांत का नाम लिया, तभी सारा भेद खुल गया। देवकात फिर कैसे बच पाते?

उधर गौरी हक्की-बक्की खड़ी थी। समझ नहीं पा रही थी कि पुलिस उसके पिता को क्यों पकड़ रही है ? देवकात ने एक व्यक्ति को वकील साहब के घर का पता बता दिया। बोले, "मेरी बेटी को वहाँ पहुँचा दीजिए। आपका एहसानमद रहूँगा।" फिर वह चुपचाप

पुलिसवालो की गाड़ी मे बैठ गए।

गौरी भीगी ऑखो से पिता को जाते देख रही थी। घर आते ही वह फूट-फूटकर रो पड़ी। वकील साहब और राधा ने किसी तरह उसे चुप कराया। सोमेश बाबू देवकांत को जेल से छुड़ाने की कोशिशों मे जुट गए।

शहर मे जिसको भी पता चला कि बापू ने गौरी को मालाएँ दी हैं, वह दौडकर गौरी के पास आया। गौरी माला में से एक फूल निकालकर दे देती। इस तरह देते-देते सिर्फ़ एक फूल बचा। गौरी ने वह किसी को नहीं दिया। चुपचाप भीतर जाकर पिताजी का झोला उठाया। उसमें 'वंदेमातरम्' किताब थी जो उसके पिता को बहुत प्रिय थी। वह फूल उस किताब मे रख दिया।

अब गौरी गुमसुम, उदास रहने लगी। दिनभर चुपचाप बैठी, कुछ सोचती रहती। कभी-कभी कातर होकर पूछती, "मेरे पिता का क्या

कसूर था ? कब वह जेल से छूटकर आएँगे ?" उसे दिलासा देते-देते खुद सोमेश बाबू की आँखे भीग जातीं। अकेली राधा ही थी जो उसे किसी तरह बहलाए रखती।

आखिर दो वर्ष बाद देवकांत जेल से छूटे। जैसे ही वह घर आए गौरी उनसे लिपट गई। फिर उसे कुछ याद आया। बोली, "ठहरिए पिताजी।"

वह दौडकर भीतर गई। किताब उठा लाई। देवकांत ने देखा, उसमें गेंदे का सूखा फूल रखा हुआ था। उन्होने गौरी की ओर देखकर पूछा, "यह क्या बेटी ?"

गौरी बोली, "गाधीजी ने फूल मालाएँ दी थीं न ! एक-एक फूल सब ले गए। .. लेकिन एक फूल मैंने बचा लिया, आपके लिए। आपने भी तो भारत माँ की आजादी के लिए कष्ट सहे हैं।"

देवकात ने गौरी को उठाकर गले लगा लिया। उनकी आँखे छलछला उठी थी।

– *देवेद्र सत्यार्थी*

प्रश्न

1 देवकात वेश बदलकर काशी से अमृतसर क्यो आए ?

2. अमृतसर आकर गौरी प्रसन्न क्यो थी ?

3. गौरी से उपहार लेते समय बापू ने क्या शर्त रखी ?
4 'गौरी, ये फूल अनमोल हैं। सँभालकर रखना' देवकात ने ऐसा क्यो कहा ?
5 देवकात को पुलिस ने क्यो गिरफ़्तार किया ?
6. गौरी ने एक फूल क्यो बचा लिया था ?

6. अन्याय के विरुद्ध

कुछ दिन पहले की बात है मैंने अपने बच्चों की मास्टरनी जूलिया को अपने पढने के कमरे में बुलाया और कहा, "बैठो जूलिया। मैं तुम्हारी तनख्वाह का हिसाब करना चाहता हूँ। मेरे ख्याल से तुम्हें पैसों की ज़रूरत होगी और जितना मैं तुम्हें अब तक जान सका हूँ, मुझे लगता है तुम अपने आप कभी अपने पैसे नहीं माँगोगी। इसलिए मैं खुद ही तुम्हें पैसे देना चाहता हूँ। हाँ, तो तुम्हारी तनख्वाह तीस रूबल महीना तय हुई थी न?..."

"जी नहीं, चालीस रूबल", जूलिया ने दबे स्वर में कहा।

"नहीं भाई, तीस। मैंने डायरी में नोट कर रखा है। मैं बच्चों
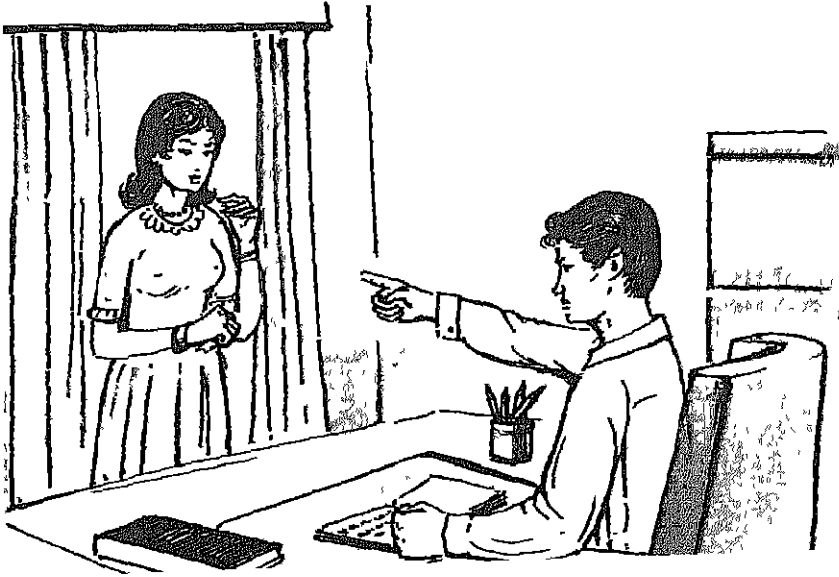
की मास्टरनी को हमेशा तीस रूबल महीना ही देता आया हूँ। अच्छा तो तुम्हें हमारे यहाँ काम करते हुए दो महीने हुए हैं . "

"जी नहीं, दो महीने पाँच दिन।"

"क्या कह रही हो ! ठीक दो महीने हुए हैं। भाई, मैंने डायरी में सब लिख रखा है। तो दो महीने के बनते हैं साठ रूबल। लेकिन साठ रूबल तभी बनेंगे जब महीने में एक भी नागा न हुआ हो। तुमने रविवार की छुट्टी मनाई है। उस दिन तुमने काम नहीं किया है। कोल्या को सिर्फ़ घुमाने भर ले गई हो। इसके अलावा तुमने तीन छुट्टियाँ और ली हैं .."

जूलिया का चेहरा पीला पड गया। वह बार-बार अपनी ड्रेस की सिकुड़नें दूर करने लगी। बोली एक शब्द नहीं।

"हाँ, तो नौ इतवार और तीन छुट्टियाँ .. यानी बारह दिन काम नहीं हुआ। मतलब यह कि तुम्हारे बारह रूबल कट गए। उधर कोल्या चार दिन बीमार रहा और तुमने सिर्फ़ वान्या को ही पढ़ाया। पिछले हफ़्ते शायद तीन दिन हमारे दाँतो मे दर्द हो रहा था और मेरी बीवी ने तुम्हें दोपहर के बाद छुट्टी दे दी थी। तो बारह सात हुए उन्नीस। उन्नीस नागे। हाँ, तो भाई घटाओ साठ में से उन्नीस। कितने बचे ? . इकतालीस . . इकतालीस रूबल। ठीक है न ?"

जूलिया की आँखों मे आँसू छलक आए। उसने धीरे से खाँसा। इसके बाद उसने अपनी नाक साफ़ की। बोली एक शब्द भी नहीं।

"हाँ, याद आया," मैंने डायरी देखते हुए कहा, "पहली जनवरी

को तुमने चाय की प्लेट और प्याली तोड़ी थी। प्याली बहुत कीमती थी। मगर मेरे भाग्य में तो हमेशा नुकसान उठाना ही बदा है। चलो, मैं उसके दो ही रूबल काटूँगा। अब देखो, उस दिन तुमने ध्यान नहीं रखा और तुम्हारी नज़र बचाकर कोल्या पेड़ पर चढ़ गया और वहाँ खरोच लगकर उसकी जैकेटे फट गई। दस रूबल उसके कट गए। इसी तरह तुम्हारी लापरवाही के कारण नौकरानी ने वान्या के जूते चुरा लिए .. अब देखो भाई तुम्हारा काम बच्चों की देखभाल है। तुम्हें इसी के तो पैसे मिलते हैं। तुम अपने काम में ढील दोगी, तो पैसे कटेंगे या नही ? मैं ठीक कह रहा हूँ न ? . तो जूतों के लिए पॉच रूबल और कट गए। . और हाँ, दस जनवरी को मैंने तुम्हें दस रूबल दिए थे। . "

"जी नहीं, आपने मुझे कुछ नहीं ..." जूलिया ने दबी ज़बान से कहना चाहा।

"अरे, मैं क्या झूठ बोल रहा हूँ ? मैं डायरी में हर चीज नोट कर लेता हूँ। तुम्हे यकीन न हो तो दिखाऊँ डायरी ?"

"जी नहीं। आप कह रहे हैं, तो आपने दिए ही होंगे।"

"दिए होंगे नही, दिए हैं।" मैंने कठोर स्वर में कहा, "तो ठीक है घटाओ सत्ताईस, इकतालीस मे से ... बचे चौदह। ... क्यो हिसाब ठीक है न ?"

उसकी आँखे ऑसुओं से भर उठीं। उसके तमाम शरीर पर पसीना छलछला आया। कॉपती आवाज़ में वह बोली, "मुझे अभी तक एक

ही बार कुछ पैसे मिले थे और वे भी आपकी पत्नी ने दिए थे। सिर्फ़ तीन रूबल। ज़्यादा नहीं।"

"अच्छा !" मैंने स्वर मे आश्चर्य भरकर कहा, "और इतनी बड़ी बात तुम्हारी मालकिन ने मुझे बताई तक नहीं। देखो, हो जाता न अनर्थ। खैर, मैं इसे भी डायरी मे नोट कर लेता हूँ। हाँ, तो, चौदह में वे तीन और घटा दो। बचते हैं ग्यारह रूबल। तो लो भाई, ये रही तुम्हारी तनख्वाह . ये ग्यारह रूबल। देख लो ठीक हैं न ?"

उसने काँपते हाथो से ग्यारह रूबल लिए और अपनी जेब टटोल कर किसी तरह उन्हे उसमे ठूँस लिए और धीमे विनीत स्वर में बोली, "जी, धन्यवाद !"

मैं गुस्से से उबलने लगा। कमरे मे चक्कर लगाते हुए मैंने क्रुद्ध स्वर मे कहा, "धन्यवाद किस बात का ?"

"आपने मुझे पैसे दिए, इसके लिए धन्यवाद।"
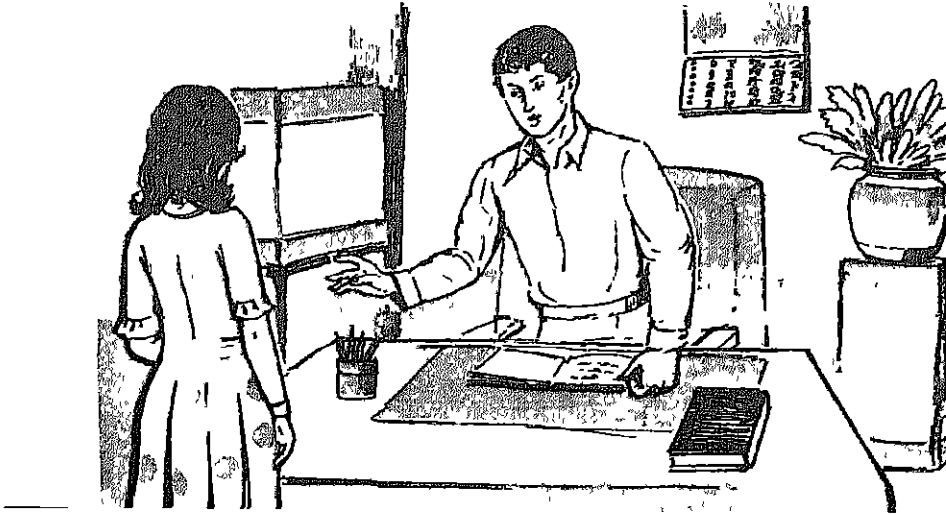
अब मुझसे नहीं रहा गया। मैंने ऊँचे स्वर में, लगभग चिल्लाते हुए कहा, "तुम मुझे धन्यवाद दे रही हो जबकि तुम अच्छी तरह जानती हो कि मैंने तुम्हे ठग लिया है। तुम्हें धोखा दिया है। तुम्हारे पैसे हड़प लिए हैं। ... इसके बावजूद तुम मुझे धन्यवाद दे रही हो।"

"जी हाँ ! इससे पहले मैंने जहाँ-जहाँ काम किया, उन लोगों ने तो मुझे एक पैसा तक नही दिया। आप कुछ तो दे रहे हैं।" उसने मेरे क्रोध पर ठडे पानी का छींटा-सा मारते हुए कहा।

"उन लोगो ने तुम्हे एक पैसा भी नहीं दिया ! जूलिया, मुझे यह बात सुनकर तनिक भी अचरज नहीं हो रहा है" मैंने कहा, फिर स्वर धीमाकर मैं बोला, "जूलिया, मुझे इस बात के लिए माफ़ कर देना कि मैंने तुम्हारे साथ एक छोटा-सा क्रूर मज़ाक किया। पर मैं तुम्हें सबक सिखाना चाहता था। देखो जूलिया, मैं तुम्हारा एक पैसा भी नहीं मारूँगा। देखो यह तुम्हारे अस्सी रूबल रखे हैं। मैं अभी इन्हें तुम्हें दूँगा। लेकिन उससे पहले मैं तुमसे कुछ पूछना चाहूँगा। जूलिया, क्या जरूरी है कि इनसान भला कहलाए जाने के लिए इतना दब्बू, भीरु और बोदा बन जाए कि उसके साथ जो अन्याय हो रहा है, उसका विरोध तक न करे ? बस खामोश रहे और सारी ज़्यादतियाँ सहता जाए ? नहीं, जूलिया, नहीं। इस तरह खामोश रहने से काम नहीं चलेगा। अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए तुम्हें इस कठोर, निर्मम और हृदयहीन संसार से लड़ना होगा। अपने दाँतों और पंजों के साथ लड़ना होगा, पूरी ताकत के साथ। मत भूलो जूलिया कि इस संसार

में दब्बू, भीरु और बोदे लोगों के लिए कोई जगह नहीं है ... कोई जगह नहीं है ..."

अनु प्रभाकर द्विवेदी

प्रश्न

1. किस हिसाब से लेखक ने जूलिया की तनख्वाह अस्सी रूबल से घटाकर ग्यारह रूबल निश्चित कर दिखाई ?
2. बहुत कम तनख्वाह पाने पर भी जूलिया लेखक का विरोध क्यो नहीं कर सकी ?
3. जूलिया द्वारा धन्यवाद दिए जाने पर लेखक गुस्से में क्यो उबलने लगा ?
4. लेखक जानबूझकर जूलिया के प्रति ऐसा अन्यायपूर्ण व्यवहार क्यों कर रहा था ?
5. अतोन चेखोव इस कहानी के द्वारा क्या सदेश देना चाहते हैं?

7. दानी कुमणन

दो हज़ार साल पहले तमिलनाडु में मुदिरम् नाम का एक पहाड़ी प्रदेश था। वहाँ कुमणन नाम का राजा शासन करता था। वह बड़ा दानी, प्रजावत्सल और न्यायपालक था। वह विद्वानों, कवियों, कलाकारों का आदर करता था। उसके मन मे दीन-दुखी लोगों के प्रति सहानुभूति थी। लोग मदद माँगने उसके पास आया करते थे। वह याचकों की माँग आदरपूर्वक पूरी करता था।

एक बार पड़ोसी राज्य मे अकाल पड़ा। वहाँ से कई परिवार कुमणन के पास राहत पाने के लिए आए। सब-के-सब भूखे-प्यासे और थके-माँदे थे। बाल-बच्चे भूख से बिलख रहे थे। बूढ़े लोगों की हालत और
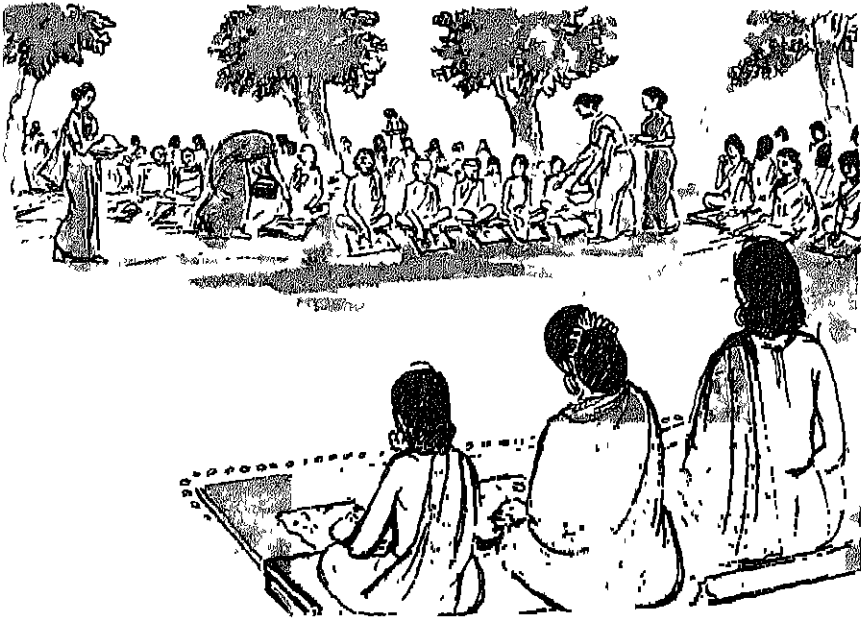
खराब थी। कुमणन ने तुरत अपने महल में ही बढ़िया भोजन बनवाया। अकाल पीड़ित परिवारो को भी राजपरिवार के साथ बिठाकर भोजन खिलाया, इसी प्रकार बहुत दिनो तक राजमहल में रखकर उनका पालन-पोषण किया।

तमिलनाडु के कोने-कोने से कवि, पडित, कलाकार और साधु-संत कुमणन के पास आते, आदर-सत्कार पाते और भेट-उपहार लेकर लौट जाते थे। उस जमाने के कवि, विद्वान, कलाकार बडे स्वाभिमानी और सच्चे समाजसेवी थे। वे राजा-प्रजा के हितैषी और मार्गदर्शक भी थे। वे लोग अपने लिए धन-संपत्ति जमा नहीं करते थे। उनका पालन-पोषण राजा की ओर से आदर के साथ हुआ करता था।

राजा कुमणन के ऐसे ही दो हितैषी थे। महापडित चात्तनार और महाकवि चित्रनार। जब भी उनको किसी चीज़ की जरूरत पडती, कुमणन के पास चले आते और उनसे मॉगकर ले जाते। कुमणन उन दोनो विद्वानो का बड़ा आदर करता था। उन्होने कुमणन की दान-शीलता और उदारता की प्रशसा मे कई सुदर गीत गाए हैं। घुमंतू चारण-भाट गायको ने उन कीर्तिगानो को गाते हुए तमिल प्रदेश के कोने-कोने मे कुमणन का यश फैलाया।

एक दिन महाकवि चित्रनार कुमणन से थोड़ा धन माँगने के लिए आए। उस समय कुमणन ज़रूरी राजकाज में लगे हुए थे। इसलिए महाकवि का सदेश पाते ही राजा ने अपने मंत्री के हाथ कुछ धन देकर उनके पास भेज दिया।

महाकवि को यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा। उन्होंने मंत्री के दिए धन को स्वीकार नहीं किया। सीधे राजा कुमणन के पास चले आए और बोले, "मेरे प्रिय नरेश ! मैं तुमसे मिलने और तुम्हारे हाथो से उपहार पाने आया हूँ। मुझे मामूली याचक न समझ बैठना। तुम दूसरे के हाथो विपुल संपत्ति भी भेज दो, मैं लूँगा नहीं, तुम स्नेहपूर्वक रत्ती-भर वस्तु भी दे दो, वही मेरे लिए काफी होगी, मैं उसे सहर्ष स्वीकार कर लूँगा।"

कुमणन महाकवि की झिड़की सुनकर लज्जित हुआ। उसने अपनी गलती के लिए महाकवि से क्षमा माँगी। उसको इसी महाकवि की एक पुरानी बात याद हो आई। वे एक बार पड़ोसी प्रदेश के राजा वेलियान के महल मे गए थे। उस समय वह आराम कर रहा था। महाकवि के आने का समाचार मिला। उनका स्वागत करने वह स्वयं नहीं आया, अपने भाई से बोला, "तुम उनका स्वागत-सत्कार करो। थोडा धन देकर उनको विदा करके आओ।"

महाकवि चित्रनार ने देखा कि राजा वेलियान स्वय न आकर अपने भाई को भेज रहा है। वे तुरत वहाँ से उठकर चले आए और कुमणन के पास गए। कुमणन ने उनका आदर के साथ स्वागत किया। महाकवि ने कुमणन की प्रशसा मे सुदर गीत गाए। कुमणन ने बहुत हर्षित होकर उनको एक सजा-धजा हाथी और धन-राशि देकर विदा किया।

महाकवि चित्रनार उस हाथी को लेकर वेलियान के महल मे गए और उनसे कहा, "मेरे राजा ! यह लो मेरी ओर से यह उपहार।

यदि तुम्हारे पास मेरा सम्मान करने के लिए फ़ुरसत नहीं है, तो क्या हुआ ? मेरे पास तुम-जैसे राजाओ का आदर करने के लिए समय है, सामर्थ्य भी है।"

राजा वेलियान लज्जित हुआ। वह महाकवि के चरणो पर गिरकर क्षमा माँगने लगा।

कुमणन को यह घटना याद आई। उसने निश्चय कर लिया कि आगे से ऐसी गलती मुझसे नही होनी चाहिए।

कुमणन के दूसरे मित्र थे महापडित चात्तनार। वे भी समय-समय पर आकर राजा से भेंट-उपहार लिया करते थे। वे उदार स्वभाव के थे, उनको जो कुछ मिलता, उसे अपने गरीब रिश्तेदारों के साथ बाँट लेते थे। थोडे समय के बाद महापंडित चात्तनार के पास कुछ नहीं बचा। अपना परिवार चलाना भी मुश्किल हो गया। भुखमरी की नौबत आ गई। तब उन्हे दानी राजा कुमणन की याद आई। वे उनसे मिलने मुदिरम् नगर मे आए, किंतु वहॉ स्थिति एकदम बदली हुई थी।

कुमणन का एक सौतेला छोटा भाई था – इलकुमणन। वह सत्तालोभी और चालाक आदमी था। उसने विद्रोह करके राजगद्दी हथिया ली और अपने बडे भाई को राज्य से ही अलग कर दिया।

शातिप्रिय कुमणन अचानक हुए विद्रोह को दबा नहीं सका। उस समय की लडाई में वह हार गया। राजपाट छोडकर उसी पहाडी प्रदेश के जगल मे कुटिया बनाकर अपने परिवार के साथ रहने लगा। फिर भी उसी का नाम और यश उस प्रात में ऊँचा था।

नए शासक इलकुमणन ने सोचा, "बड़े भाई के रहते मुझे कोई नही मानेगा और मेरी शासन-सत्ता भी स्थिर नही रह सकती। इसलिए उनको इस दुनिया से ही अलग कर देना चाहिए ।"

बस, दूसरे ही दिन इलंकुमणन ने राज्यभर में ढिढोरा पिटवाया कि जो व्यक्ति मेरे पराजित भाई का सिर काटकर लाएगा, उसे एक हजार स्वर्ण मुद्राएँ भेंट की जाएँगी।

इस घोषणा को सुनते ही लोगों में खलबली मच गई। सभी प्रजाजन नए शासक इलकुमणन से घृणा करने लगे और उसकी निंदा भी। इस नीचतापूर्ण घोषणा की सभी ने अवहेलना कर दी।

महापंडित चात्तनार अपने दानी मित्र कुमणन की दुर्दशा जानकर बहुत दुःखी हुए। वे उसको खोजते हुए जगल में गए। कुमणन से मुलाकात हुई। दोनों स्नेह से गले मिलकर रो पडे। भाग्य का यह कैसा क्रूर खेल है। लाचारी का 'एहसास' दोनो को अधिक सताने लगा।

कुमणन भॉप गया कि हितैशी मित्र चात्तनार तग हालत मे हैं और मुझसे मदद लेने आए हैं। उसको अपनी दुर्दशा पर बहुत दुःख हुआ। वह सोचने लगा, "मैं कितना अभागा हूँ। घर आए आदरणीय अतिथि का सत्कार करने और इनकी मदद करने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है। ऐसे निकृष्ट जीवन से लाभ ही क्या है ?"

कुमणन ने निश्चय किया कि वे मित्र महापडित को खाली हाथ नही जाने देगे। उसने चात्तनार से निवेदन किया, "मेरे आदरणीय बंधु, आप मेरी यह तलवार लीजिए। इससे मेरा सिर काटकर ले जाइए

और मेरे भाई को सौंप दीजिए। वह आपको एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ भेट करेगा। उस धनराशि से आप पहले की तरह अपने परिवार तथा रिश्तेदारो का पालन-पोषण करें।

दानी कुमणन की यह बात सुनते ही चात्तनार सिहर उठे, बिलख-बिलखकर रो पडे। वे अपनी तगी और तकलीफ भूल गए। वे सोचने लगे, "यह कुमणन कितना महान् दानवीर है। ऐसे त्यागी पुरुष की यह दुर्दशा नहीं होनी चाहिए। इस विपत्ति से इसको उबारना मेरा कर्तव्य है। अब मैं यही करूँगा ..।"

चात्तनार ने कुमणन से तलवार ली और कहा, "मेरे प्रिय मित्र ! तुम मेरे लौट आने तक सब्र करो। मैं वापस आकर तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा।"

चात्तनार जगल से लौटकर नगर के प्रसिद्ध शिल्पी के यहाँ पहुँचे। उन्होंने उस शिल्पी से कुमणन का कटा हुआ सिर जैसा ही एक सिर

मोम का बनवाया। वे उस सिर को कपड़े से ढककर राजमहल में ले गए।

इलकुमणन राजगद्दी पर बैठा हुआ था। सामने गणमान्य दरबारी लोग थे। महापंडित चात्तनार ने कटे हुए सिर को राजा के सामने रखा और कहा, "नए शासक ! यह लो, तुम्हारे ऐलान की भेंट। अब तो तुम्हारा दिल ठडा हुआ न ? लेकिन, हाँ यह न भूलो कि इस अत्याचार से तुम्हारा जीवन और शासन संकट से मुक्त हो गया।"

खून से सना और कटा हुआ सिर देखते ही इलंकुमणन भौचक रह गया। उसको विश्वास हो चुका था कि पूरे प्रदेश मे ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिलेगा जो धन के लालच में कुमणन की हत्या करने को तैयार हो जाए। ऐसी हालत में इस अनहोनी घटना से वह विचलित हो उठा। उसकी मानवता जाग उठी। शोक और पश्चाताप की आग
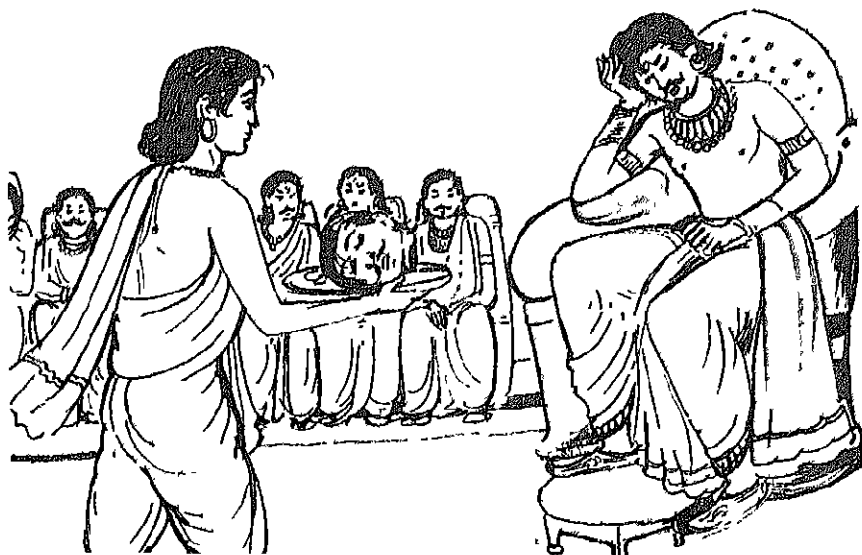
में वह झुलसने लगा। लज्जा के कारण उसका सिर झुक गया। उसने दबे स्वर मे कहा, "महापडित ! आपने यह क्या कर दिया ? मैं सत्ता के मोह में पड़कर भाईचारा, सद्भाव और शील सब भूल बैठा। आप तो बडे विद्वान हैं और मेरे बड़े भाई के मित्र भी हैं। आपके हाथों यह पाप कैसे हुआ ?"

चात्तनार इलकुमणन के हृदय-परिवर्तन से आश्वस्त हुए। वे शांत भाव से बोले, "युवराज ! तुमसे इसी हृदय-परिवर्तन की आशा मुझे थी। इसीलिए मैंने यह उपाय किया है। तुम्हारे बड़े भाई दानी कुमणन जगल मे भले-चंगे हैं। यह उनका नकली सिर है जो मोम का बना है। अब तो तुम्हें अपने किए पाप का प्रायश्चित करना है, करोगे ?"

इलंकुमणन ने हाथ जोड़कर चात्तनार से क्षमा माँगी और प्रार्थना की, "महापंडित जी ! आज्ञा दीजिए। मैं अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ।"

चात्तनार ने उसे समझाया, "युवराज ! तुम बड़े भाई को आदर के साथ वापस बुला लाओ। उनको यह राजगद्दी सौंप दो। इस प्रात के पुराने राजा लोग बडे दानी, नीतिपालक और विद्याप्रेमी थे। तुम्हारे पूर्वजों ने अच्छे-भले काम कर बड़ी ख्याति पाई है। युवराज ! तुम भी अपने पूर्वजों की तरह अच्छे काम करके कीर्ति पाओ।"

युवराज इलंकुमणन ने चात्तनार की सलाह मानी। वह बड़े भाई को आदर के साथ ले आया और उनको राजगद्दी सौंपकर स्वयं युवराज बना। महापंडित चात्तनार अपने प्रयास की सफलता पर फूले न समाए।

वे दोनों भाइयों से भेट-उपहार पाकर आनंद के साथ घर लौटे।

- र शौरिराजन

प्रश्न

1. 'कुमणन बड़ा दानशील और जरूरतमदो की सहायता करने वाला राजा था।' उदाहरण देकर इस कथन की पुष्टि कीजिए।
2. महाकवि चित्रनार के स्वाभिमान को दर्शाने वाली किसी एक घटना का उल्लेख कीजिए।
3. राजा कुमणन से चित्रनार के स्वागत मे क्या गलती हुई और उन्होने उसे कैसे सुधारा ?
4. इलकुमणन ने अपने बड़े भाई कुमणन के साथ क्या अन्याय किया ?
5. 'बड़े भाई के रहते हुए मुझे कोई नहीं मानेगा और मेरी राजसत्ता भी स्थिर नहीं रह सकती।' इलकुमणन ने ऐसा क्यो सोचा ?
6. महापंडित चात्तनार इलंकुमणन का हृदय-परिवर्तन करने में किस प्रकार सफल हुए ?

8. शापमुक्ति

एक दिन ऐसा हुआ कि मैं अपनी बूढी दादी की आँखो का इलाज कराने दिल्ली के एक बडे प्रसिद्ध नेत्र-चिकित्सक डॉ. प्रभात के पास गया। लगभग अधी हो चुकी दादी को सहारा दिए जब मैं डॉ प्रभात के कमरे मे पहुँचा तो उन्होने मुसकराते हुए दादी का स्वागत किया, "आओ, आओ, दादी अम्मा ! कहॉ, क्या तकलीफ है ?

दादी ने आवाज से ही डॉक्टर की उम्र का अनुमान लगा कर कहा, "कोई तकलीफ़ नहीं, बेटा। बस बुढापे की मारी हूँ। बुढापे मे नजर कमज़ोर हो ही जाती है।"

"पर मैं तो आँखो का डॉक्टर हूँ, दादी अम्मा ! बुढापे का इलाज मेरे पास कहॉ ?" डॉ प्रभात ने हॅसते हुए कहा।

मेरी दादी भी कम विनोदी स्वभाव की नही। कहने लगी, "कोई बात नहीं, बेटा ! तुम ऑखो का इलाज ही कर दो, बुढापे का इलाज तो भगवान के पास भी नहीं है।"

यह सुनकर डॉ. प्रभात हॅस पडे और दादी से बात करते हुए उनकी ऑखो की जॉच करने लगे। उन्होने विस्तार से, कई उपकरणो और यन्त्रो की सहायता से दादी की ऑखो की जॉच की। बीच-बीच मे बातचीत और हॅसी-मज़ाक भी करते जाते थे।

मैं चुपचाप बैठा डॉ प्रभात की ओर देख रहा था। पहले तो

मुझे उनकी हँसी ही कुछ जानी-पहचानी लगी थी, फिर ध्यान से देखने पर उनका चेहरा भी कुछ परिचित-सा मालूम हुआ। लेकिन याद नहीं आ रहा था कि मैंने इन्हे पहले कहाँ देखा है। आखिर जब उन्होने दादी की आँखो की पूरी जाँच कर ली, तो मैंने पूछ ही लिया, "आप कहाँ के रहने वाले हैं, डॉक्टर साहब?"

"इलाहाबाद का हूँ।" क्यो ?

"अरे, हम भी इलाहाबाद के ही हैं।" दादी मुझसे पहले ही बोल उठीं।

"अच्छा ? बडी खुशी हुई।" डॉ. प्रभात ने सचमुच खुश होकर पूछा, "इलाहाबाद मे कहाँ रहते हैं आप लोग ?"

दादी ने ज्योही हमारे इलाहाबाद वाले घर का पता-ठिकाना बताया, डॉ. प्रभात ने मेरी तरफ़ देखा और अचरज भरी प्रसन्नता से बोले, "अरे, तुम बब्बू तो नहीं हो?"

"और तुम मटू ?" अचानक मेरे मुँह से निकल गया, "तुम आप मेरे बचपन के मित्र मंटू हैं न ?"

"हाँ भई, मैं मटू ही हूँ। वाह, यार तुम खूब मिले ! तुम तो शायद जब दूसरी या तीसरी कक्षा मे पढते थे, तभी अपने परिवार के साथ दिल्ली चले आए थे। है न ? वाह, मुझे तो स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि जीवन मे फिर कभी तुमसे भेंट होगी। सच, बड़ी खुशी हुई तुमसे मिलकर।"

"मुझे भी।" मैंने अत्यंत प्रसन्न होकर कहा।

तभी डॉ. प्रभात ने दादी का चेहरा ध्यान से देखा और अचानक उनकी मुसकान लुप्त हो गई। चेहरा किसी दुखदाई स्मृति मे काला-सा हो आया। दादी की अत्यधिक कमजोर आँखों को डॉक्टर के चेहरे का यह भाव-परिवर्तन नजर नहीं आया। वे प्रसन्न होकर पूछने लगीं, "अच्छा, तो तुम दोनों बचपन मे साथ-साथ खेले हो ? यह तो बड़ा अच्छा सयोग रहा। तुम तो अपने ही हुए, डॉक्टर बेटा। हाँ, तुमने अपना क्या नाम बताया? मट्टू ? इलाहाबाद मे हमारे पड़ोस में एक वकील रहते थे, उनके लडके का नाम भी कुछ ऐसा ही था। बड़ा बदमाश लड़का था ..."

डॉ. प्रभात ने कोई उत्तर नहीं दिया। वे सहसा बहुत गंभीर हो गए। दादी के लिए दवाई का पर्चा लिखते हुए उन्होंने कहा, "ये बाते फिर कभी होगी, दादी अम्मा ! बाहर और भी कई रोगी इंतज़ार कर रहे हैं। मैं तुम्हारी दवाई लिख रहा हूँ। बाज़ार से मँगवा लेना और दिन में तीन बार आँखो में डालती रहना। फिर अगले सप्ताह आज के ही दिन आ जाना। तुम्हारी आँखों का ऑपरेशन करना होगा। घबराना मत, ईश्वर ने चाहा तो तुम्हारी आँखें अच्छी हो जाएँगी।"

बाहर आते ही दादी ने मुझसे पूछा, "यह उसी वकील का बेटा मंटुआ था न ?"

"हाँ, दादी ! बचपन में मेरे साथ पढ़ता था।"

"बस, तो अब इसके पास दुबारा आने की ज़रूरत नहीं। मैं इस दुष्ट के हाथों अपनी आँखें नहीं फुड़वाऊँगी।"

"कैसी बातें करती हो, दादी ! यह तो बहुत माना हुआ डॉक्टर है और अब तो अपनी जान-पहचान का भी निकल आया। उसे दुष्ट क्यों कह रही हो ?"

"तू भूल गया इसने वहाँ इलाहाबाद में क्या किया था ?"

"क्या किया था ?"

"अरे, तुझे याद नहीं, इसने मुहल्ले की कुतिया के तीन पिल्लों की आँखें आक के पौधे का दूध डालकर फोड़ दी थी ? तूने ही तो यह बात हम लोगों को बताई थी। उनमें से एक अंधा पिल्ला तूने ज़िद करके पाला था, यह भी तुझे याद नहीं ?"

मैं सचमुच ही सब कुछ भूला हुआ था, लेकिन दादी के याद दिलाने पर एक धुँधली-सी स्मृति उभरी और ज्योंही मैंने दिमाग पर थोड़ा ज़ोर दिया, बचपन की वह दुःखद स्मृति सहसा कल की-सी घटना के रूप में स्पष्ट होकर मेरी आँखों के आगे आ गई।

इलाहाबाद में हमारे पड़ोसी वकील साहब की कोठी के पीछे एक बहुत बड़ा बाग और घास का मैदान था। मैं मंटू के साथ अक्सर वहाँ खेला करता था। बाग की मेंड़ के पास आक के बहुत से पौधे उगे हुए थे। एक दिन हम खेल-खेल मे आक के पत्ते तोड़ने लगे। उधर से गुज़रते हुए हमारे स्कूल के अध्यापक ने हमें देख लिया। उन्होंने हमें डाँट लगाई और बताया कि आक के पत्ते कभी नहीं तोड़ने चाहिए, क्योंकि उन्हें तोड़ने से जो गाढ़ा-गाढ़ा सफ़ेद दूध-सा निकलता है, यदि आँखों में चला जाए तो आदमी अंधा हो जाता है।

यह जानकारी हम लोगों के लिए एकदम नई और विस्मयकारी थी। वास्तव में ऐसा होता है या नहीं, यह देखने के लिए मंटू ने एक प्रयोग कर डाला था। ठंड के दिन थे और मुहल्ले में आवारा घूमने वाली एक कुतिया ने वकील साहब की कोठी के पीछे पड़ी सूखी टहनियों के ढेर के नीचे तीन पिल्ले दिए थे। पिल्ले बड़े सुंदर थे। मैं और मंटू उनसे खेला करते थे। आक के दूध के भयानक असर की जानकारी मिलने के अगले दिन जब मैं स्कूल से आकर खाना खाने के बाद मंटू के साथ खेलने गया तो मैंने देखा, मंटू आक के पौधों के पास बैठा है और उसके घुटनों मे दबा एक पिल्ला कें-कें कर रहा है। दो पिल्ले पास ही कूँ-कूँ करते इधर-उधर भटक रहे थे। नज़दीक जाकर मैंने देखा तो हैरान रह गया। मंटू आक के पत्ते तोड़-तोड़ कर उनका दूध पिल्ले की आँखों में डाल रहा था।

"यह तूने क्या किया, बेवकूफ़ ! पिल्ला अंधा हो जाएगा।" मैंने चिल्ला कर कहा।

मटू ने उस पिल्ले को नीचे रख दिया और बोला, "मैंने उन दोनों की आँखो मे भी आक का दूध भर दिया है। अब देखेगे, ये तीनो अधे होते हैं या नहीं।"

उस गाढ़े चिपचिपे दूध से तीनो पिल्लो की आँखे बंद हो गईं। कुछ दिनो बाद आँखे तो शायद खुल गई थीं, लेकिन वे अंधे हो गए थे।

मंटू के इस कुकृत्य की जानकारी केवल मुझे ही थी। मैंने उसे उन प्यारे-प्यारे पिल्लों को अंधा बना देने के लिए बहुत बुरा-भला कहा था और वकील साहब से शिकायत करने की धमकी भी दी थी। लेकिन मटू को एहसास हो गया था कि उसने अपनी जिज्ञासा शांत करने के लिए इस प्रयोग के रूप मे एक बड़ा पाप कर डाला है। उसने गिड़गिडा कर मुझसे कहा था कि यह बात मैं किसी को न बताऊँ। मैं शायद बताता भी नहीं, लेकिन जब उन तीन पिल्लों में से दो, दिन-रात कूँ-कूँ करते, इधर से उधर भटकते मर गए, मुझे बहुत दुःख हुआ और उस दिन मैं बहुत रोया।

दादी, माँ और परिवार के अन्य सभी लोग मुझसे बार-बार पूछने लगे कि मैं क्यों रो रहा हूँ ? पहले मैंने बात छिपा कर अपने मित्र मंटू को बचाने की कोशिश की, लेकिन फिर मुझे तीसरे पिल्ले का ध्यान आ गया, जो अभी जीवित था और उसकी जान बचाना मुझे

मंटू को पिटाई से बचाने से ज्यादा ज़रूरी लग रहा था। इसलिए मैंने रोते-रोते सारी बात बता दी और उस पिल्ले की आँखों का इलाज करा देने की ज़िद पकड ली। सब लोगो ने मटू को बुरा-भला कहा। वकील साहब ने उसकी पिटाई भी की। मुझे भी बहुत कुछ सुनना पडा, क्योकि मैंने भी सब कुछ जानते हुए भी बात को तब तक छिपाए रखा, जब तक दो पिल्ले मर नहीं गए।

आखिर तीसरे पिल्ले को बचाने के प्रयास किए गए। मैंने जिद करके उसे पाल लिया। पिताजी ने उसकी ऑखो का इलाज भी कराया, लेकिन वह अंधा ही रहा। माँ और दादी उसकी बडी सेवा करती थीं। मैं भी उसका बहुत ध्यान रखता था। उस समय तो उसकी जान बच गई, लेकिन जब वह बडा हो गया, एक दिन घर से बाहर निकल गया और सड़क पर किसी वाहन से कुचल कर मर गया।

उस घटना को याद कर मैं हैरान रह गया। बचपन में तीन पिल्लों की आँखें फोड देने वाला मटू आज इतना बडा नेत्र-चिकित्सक। इससे भी ज्यादा हैरानी की बात यह थी कि लगभग पैंतीस साल पहले की वह घटना, जिसे मैं भूल चुका था, दादी को अभी तक याद थी।

निश्चय ही वह घटना प्रभात को भी याद होगी। तभी तो वह हम लोगो का परिचय पाते ही अचानक चुप, गंभीर और उदास हो गए थे।

"लेकिन दादी, बचपन की उस बात को लेकर अब तो डॉ प्रभात को बुरा-भला कहना ठीक नही।" मैंने दादी को समझाने की कोशिश

की, "अब वे मंटू नही, देश के माने हुए नेत्र-चिकित्सक हैं। दूर-दूर से लोग उनके पास अपनी आँखो का इलाज कराने आते हैं। अब तक तो वे हज़ारो लोगो को उनकी खोई हुई नेत्र-ज्योति लौटा चुके होगे। क्या इतनी बड़ी सेवा से उनका वह बचपन का अबोध अवस्था में किया हुआ पाप अब तक धुल नही गया होगा ?"

"कुछ भी हो, मैं उससे अपनी आँखों का इलाज नहीं कराऊँगी।" दादी ने निश्चय के स्वर मे कहा।

दादी का स्वभाव बिलकुल बच्चो का-सा है। हठ पकड़ लेती हैं तो किसी के मनाए नही मानतीं। मैंने उन्हे बहुत समझाने की कोशिश की, लेकिन वे डॉ. प्रभात से इलाज कराने को तैयार न हुई। आँखो में डालने की जो दवाई डॉ प्रभात ने लिखकर दी थी, वह भी नही खरीदने दी। परिवार के सब लोगो ने उन्हे समझाया, लेकिन वे टस -से-मस नहीं हुई।

आखिर शाम को मैंने डॉ. प्रभात को टेलीफोन किया और दादी की जिद के बारे मे बताया। डॉ. प्रभात ने गंभीर होकर सब कुछ सुना और बोले, "तुम अपने घर का पता बताओ, मैं स्वय आकर दादी अम्मा को समझाऊँगा।"

लगभग एक घंटे बाद डॉ. प्रभात हमारे घर में थे और दादी से कह रहे थे, "दादी अम्मा ! मैंने बचपन में जो पाप किया था, उसे मैं आज तक नहीं भूला हूँ और मैं उस शाप को भी नहीं भूला हूँ, जो आपने मुझे दिया था। जब तक आप इलाहाबाद मे रहीं, मुझे देखते

ही कहने लगती थीं — अरे, कबख्त मटुआ, तूने मासूम पिल्लो की आँखे फोड़ी हैं, तेरी आँखे भी किसी दिन इसी तरह फूटेगी। आप के इस शाप से मुझे अपने पाप का बोध हुआ और मैंने फ़ैसला कर लिया कि मुझे जीवन में नेत्र-चिकित्सक ही बनना है। मेरी आँखे तो आप के शाप के कारण कभी-न-कभी फूटेंगी ही, पर उससे पहले मैं बहुत-सी आँखो को रोशनी दे जाऊँगा। उन बहुत-सी आँखो मे दो आँखें आपकी भी होंगी, दादी अम्मा।"

डॉ. प्रभात की बातो मे न जाने कैसा जादू था कि दादी की ही नहीं, हम सबकी आँखे भर आईं। दादी तो इतनी भाव-विह्वल हो उठीं की उन्होने डॉ. प्रभात को पास बुला कर हृदय से लगा लिया। उनके सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरते हुए उन्होने कहा, "जीते रहो, मेरे लाल ! तुम्हारी आँखों की ज्योति हमेशा बनी रहे।"

इसके बाद दादी ने मुझे कहा, "अरे बबुआ, तेरा बालसखा आया है, इसकी खातिरदारी नहीं करेगा ? जा,

इसके लिए अच्छी-सी मिठाई लेकर आ . और सुन, इसने मेरी आँखो के लिए जो दवाई लिखी थी न, वह भी खरीद लाना।"

- रमेश उपाध्याय

प्रश्न

1. बचपन मे बिछुडे बब्बू और मटू की मुलाकात किस प्रकार हुई ?
2. दादी का चेहरा ध्यान से देखने पर डॉ. प्रभात की मुसकान क्यों लुप्त हो गई ?
3 दादी ने डॉ. प्रभात से आँखों का इलाज करवाना क्यो मना कर दिया?
4 बब्बू ने मटू के पाप का भेद क्यो खोल दिया ?
5 मटू ने बचपन मे हुई भूल का प्रायश्चित्त किस प्रकार किया ?
6 इस कहानी का शीर्षक 'शापमुक्ति' क्यो रखा गया ?

9. देवताओं की सभा में लेखक

एक बार ईश्वर बहुत उदास था। उसने विष्णु को बुलाया और कहने लगा, "एक दिन मैंने ब्रह्मा को सृष्टि रचने का आदेश दिया था, उसने आदेश का पालन करते हुए सृष्टि की रचना कर दी, परतु उसके पालन-पोषण का भार तुम्हें सौंपा था। विष्णु ! तनिक देखो, बीसवी सदी के लोगो की क्या दशा हो गई है।"

विष्णु ने अपने चारों हाथो मे पकड़े हुए – शख, सुदर्शन चक्र, गदा और कमल ईश्वर के चरणों मे रख दिए तथा चारो हाथ जोड़ते हुए कहने लगे, "मेरे ईश्वर, सृष्टि के लोगो को जब-जब मेरी आवश्यकता अनुभव हुई, उन्होंने मुझे स्मरण किया, मैं अविलब उनके पास पहुँचा। मैंने मनुष्यो के अभावो की पूर्ति के लिए एक नहीं, अपितु बारह अवतार

लिए, परंतु अब धरती के लोगो ने मुझे स्मरण करना छोड़ दिया है। आप ही बताएँ, मैं क्या करूँ ?"

ईश्वर ने कहा, "अच्छा, सभी देवी-देवताओ को बुलाओ। उनसे भी पूछ लिया जाए कि हमारे ही रचे हुए जीव क्या सचमुच हमे भूल चुके हैं ?" सभी देवी-देवता ईश्वर के दरबार में उपस्थित हो गए।

सबसे प्रथम वरुण देवता उठे और कहने लगे, "ईश्वर, आपकी चिता उचित है। धरती और अबर के मध्य मेरा एक सहस्र द्वारो वाला घर है। मैंने हर द्वार से धरती की अवस्था की झॉकी देखी है। सचमुच लोग हमे विस्मृत कर चुके हैं। अंतरिक्ष की शक्तियो के रहस्य मुझसे अधिक कोई नही जान सकता। मेरा साथी सूर्य देवता दिन के समय मेरे कार्यों में हाथ बँटाता है, परंतु रात को मैं अकेला ही धरती और अबर पर दृष्टि रखता हूँ। धरती को जल की आवश्यकता थी, मैंने अंबर से जल लेकर नदियो के रूप में उसे प्रदान किया। जल लोगो की रक्षा करे, उन्हें प्रकोप से सुरक्षित रखे, इसलिए वे मेरी उपासना करते थे, परंतु अब भले ही घर-बार, खेत-खलिहान बह जाए, वे मुझे कभी भी स्मरण नहीं करते।"

इसके पश्चात् वायुदेव उठे और कहने लगे, "मेरी साँस लोगों को जीवनदान देती है, परतु वे अपनी किसी भी सॉस के साथ मेरा स्मरण नहीं करते।" इसी प्रकार अग्निदेवता ने कहा, "ईश्वर तुम्हारी सृष्टि की रक्षा के लिए मैं आकाश मे सूर्य के रूप मे जन्म लेता हूँ, बादलों में विद्युत के रूप में, धरती पर अग्नि के रूप में, परंतु जिन लोगों

के जीवन के लिए इतना कुछ करता हूँ, वे मुझे पूर्णतया भुला चुके हैं।"

ईश्वर की उदासी और भी गहरी हो गई तो देवताओ ने परामर्श दिया, "क्यो न धरती से कुछ लोगो को बुलाकर पूछा जाए कि वे अपने कष्टों की निवृत्ति के लिए हमे स्मरण क्यो नहीं करते ?"

"तुम लोग ही बताओ कि किस-किस को बुलाया जाए," ईश्वर ने पूछा। यह सुनते ही सभी देवी-देवता विचारमग्न हो गए। फिर कहने लगे, "यदि इस समय के राजनीतिज्ञ लोगों को बुलाया जाए तो वे सत्य नहीं बतलाएँगे, क्योंकि राजनीति मे रहकर उनको सत्य बोलने का अभ्यास ही नहीं रहा और यदि साधारण लोगो में से किसी को बुलाया जाए तो वह किसी भी दलील के साथ बात नहीं कर पाएँगे क्योकि हड्डियो को चूर कर देने वाले कड़े परिश्रम के कारण उनके सोचने की शक्ति ही समाप्त हो चुकी है।"

बडी देर तक विचार-विनिमय करने के पश्चात् सभी देवी-देवताओ ने देवी सरस्वती से कहा, "तुम्हारी उपासना करने वाले निश्चय ही सच्चे एव विवेकी होगे। क्यों न धरती से किसी लेखक को बुलाकर ससार के इस रहस्य के बारे मे पूछताछ की जाए।" सरस्वती ने स्वीकृति मे सिर हिलाया, परतु कहने लगीं, "अब तो किसी को मेरा नाम तक स्मरण नहीं होगा। अब वे मेरी पूजा-आराधना नहीं करते।"

सरस्वती की दलील से सभी सहमत थे, परंतु धरती से किसी को बुलाने का निर्णय तो करना था। इसलिए यही निर्णय लिया गया कि

किसी लेखक को बुलाकर इस भेद को जाना जाए।

इस प्रकार धरती से एक लेखक को बुलाया गया। सरस्वती उसे अपने समक्ष बिठाकर उससे वार्तालाप करने लगीं।

"सुना है, मानव जाति आजकल बहुत बड़े-बड़े व्यापार कर रही है। परंतु तुमने सभी व्यापार छोडकर एक लेखक बनने का निर्णय कैसे कर लिया?"

"मेरे पिता के पास थोडी-सी भूमि थी, परतु खेती का काम तो हड्डियॉ तोड़कर रख देता है, वह सब मुझसे संभव नहीं था। बड़ी-बड़ी नौकरियॉ तो उच्च संपर्को द्वारा ही प्राप्त होती हैं, मेरा किसी से सपर्क नहीं था। इसलिए दुखी होकर मैंने कहानियाँ लिखनी शुरू कर दीं।"

"तो क्या फिर किसी प्रकार की मानसिक शाति प्राप्त हो सकी?"

"वह तो लोगों की प्रशसा से प्राप्त होती है और प्रशंसा तो तभी

मिलती है जब रचना प्रकाशित हो जाए।"

"तुम्हारी रचना प्रकाशित नहीं होती ?"

"मैं जान नहीं पाया कि संपादक कैसे लेखकों की रचना प्रकाशित करते हैं। न तो मेरी रचना कोई संपादक छापता है, न कोई प्रकाशक मेरी पुस्तक ही प्रकाशित करता है। मैं खाने के लिए भी तरस रहा हूँ। इस निकम्मे काम से मैं दो समय के भोजन की भी व्यवस्था नहीं कर पाता।"

"हो सकता है तुमने अपनी देवी की आराधना न की हो और तुम्हारी लेखनी अभी तक इतनी सशक्त न हो पाई हो।"

लेखक क्रोधित हो उठा और कहने लगा, "मैं उसकी आराधना किस लिए करूँ। उसने मुझे क्या दिया है ? जिस कारण मैं उसकी उपासना करूँ।"

सरस्वती ने धैर्यपूर्वक कहा, "तुम्हारी आराध्य देवी तुम्हारी लेखनी को शक्ति प्रदान कर सकती है।"

"अच्छा, किस प्रकार की शक्ति ?"

ऐसी शक्ति, जिससे लोग तुम्हारी लेखनी से निकलते हुए शब्दों की प्रतीक्षा करने लगें। प्रत्येक संपादक तुम्हें पत्र लिखकर तुम्हारी नई कहानी के लिए आग्रह करे तथा अनेक प्रकाशक तुम्हारे आगे-पीछे चक्कर काटते रहे।"

"अच्छा, इतनी शक्ति।"

"यदि कोई देवी तुम्हें इतनी शक्ति दे दे तो क्या फिर तुम उसकी

उपासना करोगे?"

लेखक अट्टहास करने लगा। फिर कहने लगा, "यदि मेरे पास इतनी शक्ति आ जाए तो फिर दूसरे लोग मुझे पूजने लगेंगे, मैं किसी की पूजा क्यों करने लगा !"

- अमृता प्रीतम

प्रश्न

1. ईश्वर की उदासी का कारण क्या था ?
2. बीसवीं सदी के लोगों की दशा सुधारने के लिए विष्णु ने अपनी क्या विवशता प्रकट की ?
3. वरुण देवता ने धरती के लोगों के प्रति अपनी किन सेवाओं का उल्लेख किया ?
4. राजनीतिज्ञ, साधारण जन और लेखक में से देवताओं ने पूछताछ के लिए लेखक को ही बुलाना क्यों पसंद किया ?
5. लेखक के किस कथन से प्रकट होता है कि उसने केवल व्यवसाय के रूप में ही कहानी-लेखन को अपनाया था ?
6. लेखन की भरपूर शक्ति देने के प्रस्ताव पर भी लेखक ने सरस्वती की उपासना करना स्वीकार क्यों नहीं किया ?

10. बातूनी

आदमी सुविधा खोजने मे मारा जाता है। उस शाम अगर मैं खुद जाकर लिफ़ाफ़ा पोस्टआफ़िस मे छोड देता तो वह कष्ट न होता जो तभी से भुगत रहा हूँ।

उस शाम मुझे एक लिफ़ाफ़ा छोडना जरूरी था। मैं बाहर निकला। पोस्टआफ़िस बद होने का समय हो रहा था। सामने से एक सज्जन (बाद में इन्हे मैंने कभी सज्जन नहीं कहा) साइकिल पर जाते दिखे। मैंने उन्हे रोककर कहा, "ज़रा एक लिफ़ाफ़ा लेकर इस कागज को उसमें रखकर, यह पता लिखकर डाक में छोड़ दीजिए।"

उन्होंने कहा, "सहर्ष।" बस उनके सहर्ष ने मेरा हर्ष तभी से जो छीना है, वह तो आज तक वापस नहीं मिला।
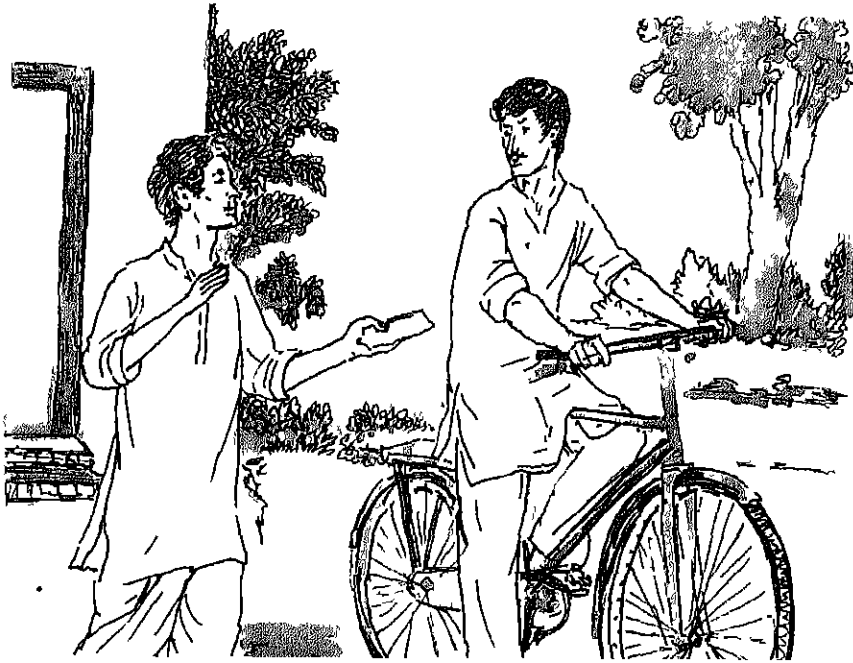
दूसरे दिन वे दिख गए, तो मैंने पूछा, "वह चिट्ठी डाल दी थी?"

आप बताइए, इसका जवाब ज़्यादा से ज़्यादा कितना लंबा हो सकता है ? यही कि– जी हाँ साहब, मैंने आपकी चिट्ठी टिकट लगाकर और पता लिखकर पोस्टआफ़िस के लाल लेटरबॉक्स में छोड़ दी थी। बस इससे ज़्यादा तो नहीं हो सकता।

पर उन्होने यह जवाब दिया, "मैं पोस्टआफ़िस पहुँचा साहब। क्या देखता हूँ कि पोस्टआफ़िस बद हो चुका है। अब मैं बडा परेशान। मैं कहूँ कि करूँ तो क्या करूँ ! आपकी चिट्ठी ज़रूरी है। आपने पहली बार तो कोई काम बताया। इतने दिनो से आप यहॉ रहते हैं, पर सेवा का कोई मौका ही नहीं मिला था। मैंने कहा, चाहे आकाश टूट जाए और पृथ्वी फट पड़े, पर आपका लिफ़ाफ़ा ज़रूर डालूँगा। तो साहब मैं बाहर निकला। अब मैं कहूँ कि जाऊँ तो कहॉ जाऊँ। इतने मे साहब, मेरी नजर पड़ी साहनी मेडिकल स्टोर पर। वहॉ साहनी बैठा था। मैं वहाँ गया। साहनी मेरा कई साल से दोस्त है। आप नहीं जानते, उसके पिता मेरे पिता के बडे दोस्त थे। बाद में उसके पिता को एक दिन दिल का दौरा पड़ा और वे घंटे-भर मे ही मर गए। ये सब आजकल दिल की बीमारी का भी बड़ा फैशन चल पड़ा है। तो मैंने कहा, "यार साहनी, लिफ़ाफ़ा दे।" उसने कहा, "लिफ़ाफ़ा तो नहीं है, टिकट है।" मैंने कहा, "ला टिकट ही दे।" मैंने साहब टिकट तो हाथ मे कर ली। अब लिफ़ाफ़ा ? मैं बाहर खड़ा-खडा कहूँ कि लिफ़ाफ़ा कहाँ से लाऊँ? अब मुझे घबराहट होने लगी। आखिरी

डाक निकलने का वक्त हो रहा था। लिफ़ाफ़ा नहीं गया तो क्या होगा? हे भगवान, तू ही रास्ता बता। मैं तो इस गाड़ी से लिफ़ाफ़ा छोड़कर ही रहूँगा, चाहे मुझे स्टेशन ही क्यों न जाना पडे। गाडी चल दी होगी, तो उसे रोककर लिफ़ाफ़ा छोड़ूँगा पर लिफ़ाफ़ा मिले कहाँ ? अचानक साहब मुझे राजू दिखा। वही राजू जो किताबो का एजेंट है। उसके हाथ में बस्ता था। मैंने सोचा, इसके पास ज़रूर लिफ़ाफ़ा होगा। मैंने कहा, "यार राजू, एक लिफ़ाफ़ा दे।" उसने कहा, "यार लिफ़ाफ़ा तो है पर उस पर फर्म का नाम छपा है।" मैंने कहा, "कोई बात नहीं। मैं उसे काट दूँगा।" मैंने लिफ़ाफ़ा ले लिया। जेब में हाथ लगाया तो कलम नहीं था। मैंने कहा, अजीब बेवकूफ़ हूँ। काम ले लिया और कलम लाया नहीं। भाग्य से राजू के पास पेन था। मैंने कहा, "यार पेन दे।" और उसने साहब, फ़ौरन निकाल कर दे दिया। राजू में इतनी बात अच्छी है। उसके पास कोई चीज़ हो तो फौरन दे देता है। अब मैं कहूँ कि काहे पर रखकर लिखूँ। मैंने झट उसका बस्ता लिया। उस पर लिफ़ाफ़ा रखा, उसकी फर्म का नाम काटा और पता लिखा और साहब, मैं भागा पोस्टऑफ़िस की तरफ़। अब संयोग से देखिए साहब, कि पहुँचा हूँ कि डाकिया चिट्ठियाँ निकालकर लेटरबॉक्स बद कर रहा था। मैंने कहा, "भाई साहब, यह चिट्ठी भी ज़रूरी है। इसे डाक मे शामिल कर लीजिए।" वह भला आदमी था। उसने लिफ़ाफ़ा ले लिया। तब साहब, मेरा मन हलका हुआ।"

यह मैंने बहुत सक्षेप में लिखा है। उन्होने लगभग आधा घटा

इस विवरण में लिया।

मैंने कसम खाई कि कभी इनसे कोई काम नहीं कराऊँगा। मगर जितना पाप कर चुका था, उसका फल तो भुगतना ही था। मेरा काम करके उन्होने मेरे ऊपर हमेशा के लिए अधिकार जमा लिया था। रास्ते मे उनका घर पड़ता था। मैं निकलता और उन्हे दिख जाता, तो वे बहुत खुश होकर मुझसे पूछते, "कहाँ जा रहे हैं ?"

मैं नहीं समझ पाता कि आमतौर पर लोग क्यों पूछते हैं कि आप कहाँ जा रहे हैं? वे क्या पुलिस के आदमी हैं या खुफ़िया विभाग के हैं या चाचा होते हैं कि जानना चाहते हैं कि तुम कहाँ जा रहे हो? यह असल मे आदमी को रोककर बात करने की भूमिका है। जिसे जल्दी जाना है, वह भी होशियारी करता है। कहता है, "कहीं नहीं,
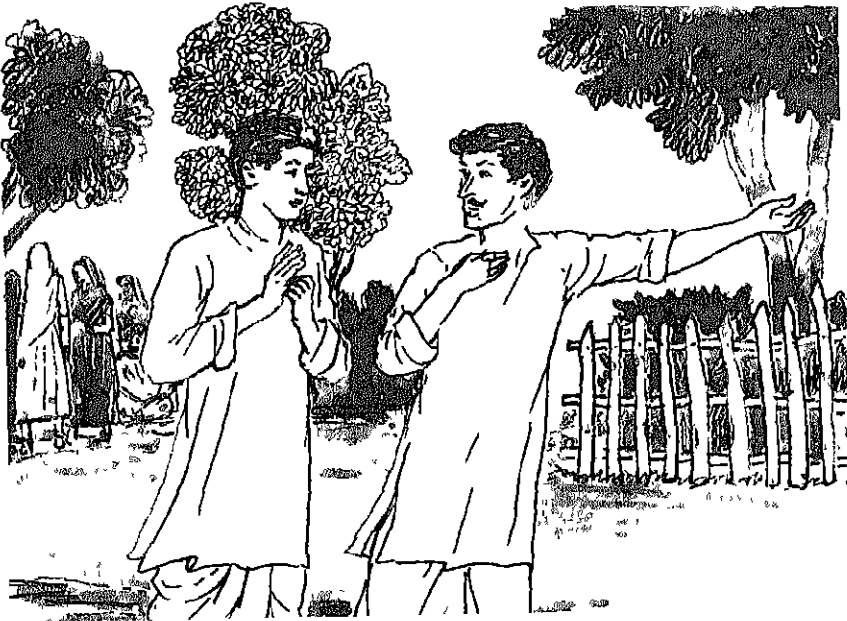
ऐसे ही।" और आगे बढ जाता है। क्या सवाल – कहाँ जा रहे हैं? और क्या जवाब है – कहीं नहीं, ऐसे ही। मगर लोग पूछते ही हैं और लोग जवाब भी देते हैं।

मैं जब रुक जाता और कहता – योही ज़रा सिविल सर्जन से मिलने जा रहा हूँ। बस वे मुझे पकड लेते – अच्छा, डॉ. गुप्ता से। वे हमारे चाचा के बडे अच्छे दोस्त थे। नागपुर में पास-पास बॅंगला था। हमारे घर आते, तो मुझे गोद मे लेकर खिलाते थे। मिलते हैं, तो कहते हैं, "क्यो बेटा भूल गए ? घर नहीं आते हो।"

वे दस-पद्रह मिनट तक डॉ. गुप्ता से अपने पारिवारिक सबध बताते।

कभी मैं कहता, "प्रोफेसर तिवारी जी से मिलने जा रहा हूँ।" वे कहते, "अच्छा-अच्छा तिवारी जी से मिलने ! हमारे फ़ादर इन-ला (ससुर) के वे बड़े पुराने दोस्त हैं। दोनों साथ-साथ पढ़ते थे। अभी भी वे हमारे प्रति प्रेमभाव रखते हैं। कभी मिल जाते हैं, तो कहते हैं, कभी घर आओ।"

मैं किसी का भी नाम लेता वह उनके चाचा, मामा, ससुर या पिता का दोस्त निकल आता और वे दस-पंद्रह मिनट उसके संबंधो के बारे में बताते। मैं एक दिन कहूँगा, "डाकू ज़ालिम सिह से मिलने जा रहा हूँ," तब वे शायद कहेगे, "अच्छा ! वे तो मेरे पिता के अच्छे दोस्त थे। दोनों साथ ही डाका डाला करते थे। जालिम सिंह ने तो मुझे गोद मे खिलाया है।"

फिर एक दिन कहूँगा, "भगवान से मिलने जा रहा हूँ।"

वे कहेगे, "भगवान से। अच्छा-अच्छा ! वे तो हमारे चाचा के बडे अच्छे दोस्त हैं। दोनों स्वर्ग में साथ काम करते थे। मेरा नाम उन्हे बताइए। वे पहचान जाएँगे। मुझे तो भगवान ने गोद मे खिलाया है।"

अब अपनी यह हालत है कि उस रास्ते को छोड़कर करीब आधा मील का चक्कर लगाकर जाता हूँ। एक दिन वे बाजार में मिल गए। कहने लगे, "आजकल आप दिखाई नहीं देते।" मैंने कहा, "बाहर निकलता ही नहीं। घर में ही रहता हूँ।"

उन्होने कहा, "अच्छा, तो फिर घर पर ही दर्शन करूँगा।"

मैं कहकर फँस गया। अगर वे घर पर दर्शन करने आ पहुँचे, तो घटों बैठेगे। सोच-विचार के बाद यह तय किया कि मैं फिर उनके घर के सामने से निकलना शुरू कर दूँ। वहीं दर्शन दे दूँ ताकि वे घर पर दर्शन करने न आ पहुँचे।

उन सज्जन से मुझे डर लगता है। वे मुझे दूर से देखते हैं, तो चेहरा खिल उठता है। मैं काँप जाता हूँ। वे घटे भर से कम मे नहीं छोडते। उनके चेहरे पर वही भाव होता है, जो सुरसा के मुख पर हनुमान को देखकर आया था। सुरसा ने कहा था, "आज सुरन मोहिं दीन अहारा – आज देवताओ ने मुझे भोजन दिया।" ये सज्जन भी किसी परिचित को देखकर मन-ही-मन कहते हैं, "आज सुरन मोहिं दीन अहारा।" वे पास आकर हाथ पकड़ लेगे और एक पाँव से आपका पाँव दबा लेगे और मुँह मिलाकर घंटे भर बकते जाएँगे। वे नर-भक्षी

हैं। हमने उनका नाम मैनईटर ऑफ़ चपावत रख दिया है और राह देख रहे हैं कि कोई कर्नल जिम कार्बेट पैदा होगा, जो उनसे हमारी रक्षा करेगा।

- हरिशकर परसाई

प्रश्न

1 सुविधा पाने के चक्कर मे लेखक को किस भारी असुविधा का सामना करना पड़ा ?

2. सामने दिखलाई पडे सज्जन को लेखक ने फिर कभी सज्जन क्यो नहीं कहा ?

3. 'आप कहाँ जा रहे हैं ?' सवाल लेखक को अटपटा क्यों लगता है ?

4 लेखक ने लेटरबॉक्स मे लिफ़ाफ़ा छोड़ने वाले सज्जन का नाम नरभक्षी मैनईटर ऑफ चंपावत क्यो रखना पसंद किया ?

5. इस कहानी मे ऐसे तीन कथन छाँटिए जो बातूनी व्यक्ति के प्रति लेखक के करारे व्यंग्य को दर्शाते हैं ?

11. जा, आया साहब

बावर्चीखाने के धुँधले वातावरण में बिजली का एक अंधा बल्ब कब्र पर जलने वाले चिराग की तरह अपनी सुर्खी फैला रहा था। धुएँ से भूरी हुई दीवारे डरावने दैत्यो की तरह अँगड़ाइयाँ लेती हुई मालूम हो रही थी। चबूतरे पर बनी हुई अँगीठियो मे आग की आखिरी चिनगारियाँ उभर-उभर कर अपनी मौत का मातम कर रही थीं। बिजली के चूल्हे पर रखी हुई केतली का पानी पता नहीं किस चीज़ पर खामोश हँसी हँस रहा था। दूर कोने में पानी के नल के पास एक छोटी उम्र का लड़का बैठा बरतन साफ़ कर रहा था। यह इंस्पेक्टर साहब का नौकर था।

बरतन साफ़ करते हुए यह लडका कुछ गुनगुना रहा था। उसकी जबान से बगैर किसी कोशिश के ये शब्द निकल रहे थे – "जी, आया साहब ! जी, आया साहब ! बस, अभी साफ़ हुए जाते हैं, साहब !"

अभी बरतनो को राख से साफ़ करने के बाद उन्हें पानी से धोकर करीने से रखना भी था और यह काम जल्दी से न हो सकता था। लडके की आँखे नींद से बद हुई जा रही थीं और सिर भारी हो रहा था। मगर काम किए बिना आराम उसे कैसे मिल सकता था !

बिजली का चूल्हा बदस्तूर एक शोर के साथ नीले शोलों को उगल रहा था। केतली का पानी उसी अदाज़ मे खिलखिला कर हँस रहा था।

अचानक लडके ने नींद के हमले को महसूस करते हुए अपने शरीर को एक झटका दिया और 'जी, आया साहब ! जी, आया साहब !' गुनगुनाता हुआ फिर काम मे मशगूल हो गया।

"कासिम ! कासिम !"

"जी, आया साहब !" लड़का जो इन्हीं शब्दो को रट रहा था, भागता हुआ अपने मालिक के पास गया।

इंस्पेक्टर साहब ने कबल से मुँह निकाला और लडके पर नाराज होते हुए कहा, "बेवकूफ़ के बच्चे ! आज फिर यहाँ सुराही और गिलास रखना भूल गया।"

"अभी लाया साहब ! अभी लाया साहब !"

कमरे मे सुराही और गिलास रखने के बाद वह अभी बरतन साफ़ करने के लिए बैठा ही था कि फिर उस कमरे से आवाज आई, "कासिम ! कासिम !"

"अभी आया साहब !" कासिम भागता हुआ अपने आका (मालिक) के पास गया।

"बसई का पानी किस कदर खराब है ! जाओ, पारसी के होटल से सोडा लेकर आओ। बस, भागे हुए जाओ, सख्त प्यास लग रही है।"

"बहुत अच्छा, साहब !"

कासिम भागा हुआ गया और पारसी के होटल से जो घर से लगभग आधे मील की दूरी पर था, सोडे की बोतल ले आया और अपने मालिक को गिलास में डाल कर दे दिया।

"अब तुम जाओ, मगर इस समय तक क्या कर रहे हो ? बरतन साफ़ नहीं हुए क्या ?"

"अभी साफ़ हो जाते हैं साहब !"

"और हाँ, बरतन साफ़ करने के बाद मेरे जूते पॉलिश कर देना, मगर देखना, चमड़े पर कोई खराश न आए, वरना .."

कासिम को 'वरना' के बाद का वाक्य बखूबी मालूम था। "बहुत अच्छा, साहब !" कहते हुए वह रसोई में वापस चला गया और बरतन साफ़ करने लगा।

अब नींद उसकी आँखों में सिमटी चली आ रही थी, पलकें आपस में मिली जा रही थीं, सिर भारी हो रहा था। यह सोचते हुए कि

साहब के बूट भी अभी पॉलिश करने हैं, कासिम ने अपने सिर को जोर से झटका दिया और वही राग अलापना शुरू कर दिया – "जी, आया साहब ! जी, आया साहब ! बूट अभी साफ़ हो जाते हैं, साहब !"

मगर नींद का तूफ़ान हज़ार बाँध बाँधने पर भी न रुका। तभी एक अजीब ख्याल उसके दिमाग मे आया, "भाड़ में जाएँ बरतन और चूल्हे में जाएँ बूट ! क्यो न थोडी देर इसी जगह पर सो जाऊँ और फिर आराम करने के बाद . "

पर इस विचार को गलत मानते हुए कासिम ने उसे वहीं त्याग दिया और बरतन पर जल्दी-जल्दी राख मलना शुरू कर दिया। थोडी देर बाद जब नींद फिर आने लगी तब मुँह पर पानी के छींटे मार-मार कर बड़ी मुश्किल से उसने सब बरतनों को आखिरकार साफ़ कर ही लिया। यह काम करने के बाद उसने इत्मीनान की साँस ली।

अब वह आराम से सो सकता था।

रसोई की रोशनी बद करने के बाद कासिम ने बाहर बरामदे मे अपना बिस्तर बिछाया और लेट गया। इसके पहले कि नींद उसे अपनी आरामदेह बाँहों मे थाम ले, उसके कान 'बूट-बूट' की आवाजो से गूँज उठे।

"बहुत अच्छा, साहब, अभी पॉलिश करता हूँ।" बड़बड़ाता हुआ कासिम बिस्तर से उठा, जैसे उसके मालिक ने अभी-अभी बूट पॉलिश करने का हुक्म दिया हो। अभी कासिम बूट का एक पैर भी अच्छी तरह पॉलिश न कर पाया था कि नींद ने उसे अपने वश में करके उसे वहीं पर सुला दिया।

सुबह जब इस्पेक्टर साहब ने अपने नौकर को बाहर बरामदे में बूटों के पास सोये हुए देखा तो उसे ठोकर मारकर जगाते हुए कहा, "यह सूअर की तरह यहाँ बेहोश पड़ा है और मेरा ख्याल था कि इसने बूट साफ़ कर दिए होंगे, नमकहराम ! अबे, कासिम !"

"जी, आया साहब !" कासिम के मुँह से इतना ही निकला था कि उसने अपने हाथ मे बूट साफ़ करने का ब्रश देखा। तुरत इस मामले को समझते हुए उसने काँपती हुई आवाज़ मे कहा, "मैं सो गया था, साहब ! मगर बूट अभी पॉलिश हुए जाते हैं, साहब !" यह कहते हुए उसने जल्दी-जल्दी बूट को ब्रश से रगड़ना शुरू कर दिया।

बूट पॉलिश करने के बाद उसने अपना बिस्तर तह किया और उसे ऊपर के कमरे में रखने चला गया।

"कासिम !"

"जी, आया साहब !"

कासिम भागा हुआ नीचे आया और अपने आका के पास खड़ा हो गया।

"देखो, आज हमारे यहाँ मेहमान आएँगे, इसलिए बावर्चीखाने के तमाम बरतन अच्छी तरह साफ़ रखना। फर्श भी धुला हुआ होना चाहिए। इसके अलावा तुम्हें बैठक की तसवीरो, मेजों और कुरसियों को भी साफ़ करना होगा, समझे ? मगर ख्याल रहे मेरी मेज़ पर एक तेज़ धार वाला चाकू पडा हुआ है, उसे मत छूना। मैं अब दफ्तर जा रहा हूँ। मगर ये काम दो घटे से पहले हो जाने चाहिए।"

"बहुत अच्छा साहब !"

इस्पेक्टर साहब दफ़्तर चले गए। कासिम रसोई साफ़ करने मे मशगूल हो गया। डेढ़ घंटे की अथक मेहनत के बाद उसने रसोई का सब काम खतम कर दिया और हाथ-पाँव साफ़ करने के बाद झाड़न लेकर बैठक में चला गया।

थोडी देर बाद उसकी आँखों के सामने एक और मंज़र (दृश्य) नाचने लगा। अब उसके सामने छोटे-छोटे लड़के आपस में खेल, खेल रहे थे। अचानक आँधी चलनी शुरू हुई, जिसके साथ ही एक कुरूप और भयानक दैत्य प्रकट हुआ, जो उन सब लड़कों को निगल गया। कासिम को लगा कि उस दैत्य की शक्ल-सूरत उसके आका की-सी थी, हालाँकि कद-काठी के लिहाज़ से वह उससे कहीं बड़ा था। अब वह

दैत्य जोर-जोर से हुकारने लगा। कासिम सिर से पैर तक कॉप गया।

अभी तमाम कमरा साफ़ करना था और वक्त बहुत कम रह गया था। इसलिए कासिम ने जल्दी-जल्दी कुरसियो पर झाड़न मारना शुरू कर दिया। जब वह कुरसियो का काम निपटा कर मेज साफ़ करने जा रहा था, उसे एकाएक ख्याल आया – "आज मेहमान आ रहे हैं, खुदा जाने कितने बरतन साफ़ करने पडेगे और यह नींद कमबख्त कितना सता रही है, मुझसे तो कुछ भी न हो सकेगा।"

यह सोचते समय वह मेज पर रखी हुई चीज़ो को पोंछ रहा था कि अचानक उसे कलमदान के पास एक खुला हुआ चाकू नजर आया– वही चाकू, जिसके बारे मे उसके आका ने कहा था कि बहुत तेज़ है।

चाकू देखते ही उसके मुँह से ये शब्द अपने-आप ही निकलने लगे, "चाकू तेज़ धार वाला चाकू ... यही तुम्हारी मुसीबत को खतम कर सकता है।"

कुछ और सोचे बिना कासिम ने वह तेज धार वाला चाकू उठाकर अपनी उँगली पर फेर लिया। अब वह शाम को बरतन साफ़ करने की ज़हमत से बहुत दूर था और नींद, प्यारी-प्यारी नींद अब उसे आसानी से नसीब हो सकती थी।

उँगली से खून की सुर्ख धार बह रही थी, सामने वाली दवात की सुर्ख रोशनाई से कहीं चमकीली। वह भागा हुआ अपने आका (मालिक) की बीवी के पास गया, जो ज़नानखाने में बैठी सिलाई कर रही थी और अपनी ज़ख्मी उँगली दिखाकर कहने लगा, "देखिए, बीवीजी।"

"अरे कासिम, यह तूने क्या किया ? कमबख्त, साहब के चाकू को छेड़ा होगा तूने।"

"बीवी जी .. बस मेज़ साफ़ कर रहा था और उसने काट खाया।" कासिम हँस पड़ा।

"अबे सूअर, अब हँसता है ? इधर आ, मैं इस पर कपड़ा बाँध दूँ। मगर अब बता तो सही, आज बरतन तेरा बाप साफ़ करेगा?"

कासिम अपनी जीत पर हलके-हलके मुसकरा रहा था।

उँगली पर पट्टी बाँध कर कासिम फिर कमरे मे आ गया और मेज़ पर पड़े हुए खून के धब्बो को साफ़ करने के बाद खुशी-खुशी अपना काम खत्तम कर दिया।

"अब उस नमकहराम बावर्ची को बरतन साफ़ करने होंगे – और ज़रूर साफ़ करने होगे – क्यो मियॉ मिट्ठू ?" कासिम ने अत्यंत प्रसन्न होकर खिडकी मे लटके हुए तोते से पूछा।

शाम को मेहमान आए और चले गए। रसोई मे साफ़ करने वाले बरतनों का एक ढेर-सा लग गया। इंस्पेक्टर साहब कासिम की जख्मी उँगली देखकर बहुत बरसे और जी खोल कर गालियाँ दीं, मगर उसे मजबूर न कर सके– शायद इसलिए कि एक बार उनकी अपनी उँगली में कलम तराशने वाले चाकू की नोक चुभ जाने से बहुत दर्द महसूस हुआ था।

आका की नाराज़गी आने वाली खुशी ने भुला दी और कासिम कूदता-फाँदता हुआ अपने बिस्तर में जा लेटा। तीन-चार दिनो तक

वह बरतन साफ़ करने के कष्ट से बचा रहा। मगर उसके बाद उँगली का ज़ख्म भर आया और अब फिर वही मुसीबत आ खड़ी हुई।

"कासिम, साहब की जुराबे और कमीज़ धो डालो।"

"बहुत अच्छा, बीवीजी !"

"कासिम, इस कमरे का फ़र्श कितना बदनुमा हो रहा है। पानी लाकर अभी साफ़ करो। देखना, कोई दाग-धब्बा बाकी न रहे।"

"बहुत अच्छा, साहब !"

"कासिम, शीशे के गिलास कितने चिकने हो रहे हैं। इन्हें नमक से साफ़ करो।"

"जी अच्छा, साहब !"

"कासिम, तोते का पिंजरा कितना गंदा हो रहा है। इसे साफ़ क्यों नहीं करते?"

"अभी करता हूँ, बीवीजी !"

"कासिम, अभी मेहतर आने वाला है। तुम पानी डालते जाना, वह सीढ़ियाँ धो डालेगा।"

"बहुत अच्छा, साहब !"

"कासिम, जरा भाग कर एक आने का दही तो ले आना।"

"अभी गया, बीवीजी !"

पॉच-छह दिन इसी तरह के आदेश सुनने मे बीत गए। कासिम काम की अधिकता और आराम की कमी से तग आ गया। हर रोज़ उसे आधी रात तक काम करना पड़ता और फिर सुबह सवेरे चार बजे के करीब जागकर नाश्ते के लिए चाय तैयार करनी पडती। यह काम कासिम की उम्र के लडके के लिए बहुत ज्यादा था।

एक दिन इस्पेक्टर साहब की मेज साफ़ करते हुए उसके हाथ खुद-ब-खुद चाकू की तरफ़ बढे और एक लमहे के बाद उसकी उँगली से खून बह रहा था। इस्पेक्टर साहब और उनकी बीवी कासिम की यह हरकत देखकर बहुत खफ़ा हुए। सजा के तौर पर उसे शाम का खाना न दिया गया। मगर वह अपनी खोजी हुई तरकीब की खुशी मे मग्न था।

एक वक्त रोटी न मिली। उॅगली मे मामूली-सा ज़ख्म आ गया। मगर बरतनो का अंबार साफ़ करने से छुट्टी मिल गई – यह सौदा कुछ बुरा न था।

कुछ दिनों बाद उसकी उॅगली का जख्म ठीक हो गया। अब फिर काम की वही मार शुरू हो गई। पद्रह-बीस दिन गधों की-सी मेहनत में गुजरे। इस अरसे मे कासिम ने बार-बार इरादा किया कि चाकू से फिर अपनी उॅगली जख्मी कर ले, मगर अब मेज़ से वह चाकू उठा लिया गया था और रसोई वाली छुरी कुद थी।

एक दिन बावर्ची बीमार पड गया। अब कासिम को हर वक्त रसोई मे मौजूद रहना पडता। कभी मिर्च पीसता, कभी आटा गूँधता, कभी कोयलों को हवा देता। सुबह से लेकर आधी रात तक उसके कानो मे – "अबे कासिम, यह कर, अबे कासिम, वह कर," की पुकार गूँजती रहती।

बावर्ची दो रोज तक न आया। कासिम की नन्ही जान और हिम्मत जवाब दे गई। मगर काम के सिवा चारा ही क्या था ?

एक दिन उसके आका ने उसे अलमारी साफ़ करने को कहा, जिसमे दवाओ की शीशियाँ और विभिन्न प्रकार की चीजें पडी हुई थी। अलमारी साफ़ करते समय उसे दाढी मूँड़ने का एक ब्लेड नजर आया। ब्लेड को पकडते ही उसने अपनी उँगली पर फेर लिया। धार थी बहुत तेज। उँगली में दूर तक उतर गई, जिससे बहुत बड़ा जख्म बन गया।

"बीवीजी, मेरी उँगली मे साहब का उस्तरा लग गया है।"

इस्पेक्टर साहब की बीवी ने कासिम की उँगली को तीसरी बार जख्मी देखा तो फ़ौरन मामले को समझ गई। चुपचाप उठी और कपडा निकाल कर उसकी उँगली पर बाँध दिया और कहा, "कासिम, अब तुम हमारे घर में नही रह सकते।"

"क्यों बीवीजी ?"

"यह साहब से पूछना।"

साहब का नाम सुनते ही कासिम का रंग और भी सफ़ेद हो गया।

चार बजे के करीब इस्पेक्टर साहब दफ़्तर से घर आए और अपनी

बीवी से कासिम की नई हरकत सुनकर उसे फ़ौरन अपने पास बुलाया, "क्यों मियाँ, ये उँगली को हर रोज़ जख्मी करने का क्या मतलब है?"

कासिम खामोश खड़ा रहा।

"तुम नौकर यह समझते हो कि हम लोग अंधे हैं और हमें बार-बार धोखा दिया जा सकता है। अपना बोरिया-बिस्तर दबाकर नाक की सीध मे यहाँ से भाग जाओ, हमें तुम जैसे नौकरों की कोई जरूरत नहीं, समझे।"

"मगर . मगर, साहब .."

"साहब का बच्चा ! भाग जा यहाँ से, तेरी बकाया तनख्वाह का एक पैसा भी नहीं दिया जाएगा। अब मैं और कुछ सुनना नहीं चाहता।"

कासिम रोता हुआ कमरे से बाहर चला गया। तोते की तरफ़ हसरत भरी निगाहों से देखा। तोते ने भी खामोशी में उससे कुछ कहा। कासिम अपना बिस्तर लेकर सीढ़ियों से नीचे उतर गया। मगर अचानक कुछ ख्याल आया और वह भागा हुआ अपने आका की बीवी के पास गया और दर्दभरी आवाज़ में इतना कह कर कि "सलाम, बीबीजी, मैं हमेशा के लिए जा रहा हूँ।"

वहाँ से रुखसत हो गया।

* * *

खैराती अस्पताल में एक लड़का दर्द की शिद्दत (अधिकता) से लोहे के पलंग पर करवटें बदल रहा है। पास ही दो डॉक्टर बैठे हैं। उनमें से एक डॉक्टर ने अपने साथी से कहा, "ज़ख्म खतरनाक सूरत

अख्तियार कर गया है – हाथ काटना पडेगा।"

"बहुत बेहतर।"

यह कहते हुए दूसरे डॉक्टर ने अपनी नोटबुक मे उस मरीज़ का नाम दर्ज़ कर लिया।

लकड़ी की एक तख्ती पर, जो उस बिस्तर के सिरहाने लटकी हुई थी, ये शब्द लिखे हुए थे :

नाम : मुहम्मद कासिम वल्द अब्दुर्रहमान (मरहूम)

उम्र · दस साल

अनु कैसर शमीम

प्रश्न

1. कासिम को क्या-क्या काम करने पडते थे ?
2. कासिम काम करते समय और नींद मे भी 'जी, आया साहब–जी, आया, साहब' क्यो बडबड़ाता रहता था ?
3. आपकी दृष्टि में कासिम के प्रति इस्पेक्टर का बर्ताव कहाँ तक उचित था ?
4. कासिम अपनी उँगली बार-बार क्यो काटता था ?
5. तीसरी बार उँगली काटने पर मालिक ने कासिम को नौकरी से क्यो निकाल दिया ?
6. सीढ़ियो से नीचे उतरने के बाद कासिम क्या सोचकर मालकिन के पास आया ?

12. भविष्य का भय

स्कूल से लौटकर आज तुलतुल ने न तो खाना ही खाया और न पार्क मे खेलने गई। मुँह फुलाकर, चुपचाप छत की सीढ़ियो वाले दरवाज़े के पास बैठ गई। इस समय यहाँ कोई नही आता, इसीलिए गुस्से, दु ख और अपमान से आहत होकर तुलतुल यही दौडी आई थी। किताब का थैला रख ही रही थी कि दादी माँ बोल पड़ीं, "लो आ गई बहादुर लड़की ! और बहादुरी का फल भी देख लो। खैर तुम्हारा क्या ? भोगना तो हम लोगो को है।"

तुरंत माँ बोल उठी, "हम क्यो भोगने जाएँ ? जिसको बहादुरी का फल मिला है वही भोगे। आज से तुलतुल बरतन धोएगी, झाड़ू-पोछा करेगी, मसाला पीसेगी। इसी के कारण तो टुनी की माँ काम छोड़कर भाग गई है।"

भैया ने भी साथ नहीं दिया बल्कि माँ की हाँ मे हाँ मिलाकर बोला, "माँ ठीक कह रही हैं। इसके लिए यही उचित है।

"हाँ, सभी तुलतुल को ही दोष दे रहे हैं, उसी से तग आकर टुनी की माँ नौकरी छोडकर चली गई है।"

माँ मेज़ पर खाना लगा रही थी और बोलती भी जा रही थी, "खाना खाकर बदन मे ताकत लाओ फिर काम मे जुट जाओ, तुलतुल ! जब किसी का कहा कुछ सुनोगी नहीं तो और क्या होगा ?"

लेकिन क्या तुलतुल ऐसा खाना खाएगी ?

तुलतुल ने स्कूल की यूनिफार्म भी नहीं उतारी, बस तीर की भाँति छत की सीढी पर जाकर बैठ गई। पहले तो उसे थोडा रोना आया। स्कूल से लौटते ही इतनी भूख लगती है। पर तुलतुल रोई नहीं, बल्कि यही सोच रही थी कि महरी को उसने किस तरह से तंग किया था। कल स्कूल से लौटते ही महरी को उसने सिर्फ इतना ही तो कहा, "ओ टुनी की माँ। इतनी ठड में टुनी को सिर्फ फटी फ्राक पहनाई है और उस पर उससे चाय के बरतन धुलवा रही है ?"

टुनी की माँ बोली थी, "हर रोज़ थोड़े ही धोती है। जल्दी के समय बस थोड़ा हाथ भर बँटा देती है।"

तुलतुल कहने लगी, "वाह ! क्या खूब कही तुमने ? तुम कैसी माँ हो ? यह भी नहीं जानती कि अंतर्राष्ट्रीय बालवर्ष है !"

और फिर टुनी की माँ की आश्चर्य से भरी आँखो को देखकर तुलतुल बोली, "उफ ! तुम तो इस बात के माने ही नहीं समझोगी। सुनो, हमारी मिस ने कहा है।"

टुनी की माँ हाथ का काम छोड़कर बोली, "किसने कहा है ?"

"अरे बाबा हमारी स्कूल की मास्टर दीदी, समझी कुछ ? उन्होंने कहा है, यह जो नया साल चल रहा है, यह साल छोटे-छोटे लडके-लडकियों का है। इस साल छोटे-छोटे लडके-लडकियो की ज्यादा देखभाल करनी होगी और उन्हे प्यार करना पड़ेगा। अच्छा-अच्छा खाना

देना होगा, अच्छे-अच्छे कपड़े और जूते पहनने के लिए देने होंगे, उन्हें पढाना-लिखाना होगा, बच्चे बीमार न पड़े उसका भी ख्याल रखना होगा, बच्चों से कोई गंदा-छोटा काम नहीं करवाया जाएगा। बात समझ मे आई ?"

टुनी की माँ थोड़ा हँसकर बोली, "आई समझ मे।"

और फिर अपनी लड़की से कहा, "मुँह फाड़े बात निगलने की ज़रूरत नहीं है, जल्दी-जल्दी हाथ चला।"

तुलतुल ने गुस्से के मारे कहा, "खाक समझी है। खबरदार टुनी, जो तुमने फिर पानी छुआ। इतनी ठड है और उससे भी अधिक ठंडे पानी में हाथ डुबोकर चाय के बरतन धो रही है। कह रही हूँ छोड़ दे।"

तुलतुल की मिस ने कहा है, "हमारे घरों में जो काम करने आते

हैं यानी जो बरतन माँजते हैं, कपड़े धोते हैं, झाड़ू-पोंछा करते हैं, उनके बच्चो को ही यदि हम सिर्फ़ थोड़े प्यार की आँखो से देखे, अगर कोशिश करे कि वे भी थोड़ा अच्छा खा लें, सरदी के दिनों मे पूरा बदन ढकने का कपड़ा मिल जाए, पढ़ने-लिखने की सुविधाएँ दी जाएँ, बीमारी मे दवा मिल जाए तो लगेगा दुनिया में हमने कुछ अच्छा काम किया है। हालाँकि तुम सभी अभी बच्चे ही हो फिर भी अभी से सोचना सीखो – कैसे दुनिया में किसी के काम आओगे। एक बात ध्यान मे रखना, दुनिया में सभी आदमी बराबर हैं। सभी छोटे बच्चो को प्यार पाने और देखभाल किए जाने का अधिकार है।"

तो फिर मिस के कहे अनुसार क्या तुलतुल कोशिश भी नहीं करेगी और फिर टुनी तो तुलतुल से भी छोटी है। दुबली-पतली हड्डियों का ढाँचा मात्र दिखती है, ऐसी टुनी ठंडे पानी मे बरतन धोएगी और तुलतुल गरम पानी में हाथ-मुँह धोकर गरम कपड़े पहनकर गरम-गरम पूरियाँ खाएगी ?

रोज़-रोज़ ऐसा ही होता था, यह सच है। पर अब तुलतुल बड़ों को ऐसी भूल नहीं करने देगी। आज तुलतुल समझ गई है कि ऐसा करना बहुत खराब बात है। अंतर्राष्ट्रीय बालवर्ष में टुनी जैसे बेचारे बच्चों की देखभाल होनी ही चाहिए।

इसीलिए तो तुलतुल चिल्लाकर बोली, "माँ नाश्ता दो .. और फिर टुनी से कहा, "ऐ टुनी, मेरे साथ चल, पूरियाँ खाएँगे।" सुनकर माँ वहीं से बोली, "ओह तुलतुल ! तू बेमतलब में देर क्यों कर रही है?

पूरियाँ उसे भी दूँगी। पहले तू खा।"

"क्यों, पहले मैं क्यों खाऊँगी ?"

"तू अभी-अभी स्कूल से आई है। अच्छा टुनी को भी पूरियाँ दे रही हूँ, तू तो बैठ।"

टुनी की माँ तुलतुल से बोली, "जाओ मुन्नी। देर करने पर माँ डाँटेंगी। आज क्या तुम्हे भूख नहीं लगी है टुनी तू तब तक कोयला तोड दे, सुबह के लिए एक चूल्हा तैयार कर रख छोड़ूँ।

फिर क्या था तुलतुल ने टुनी के हाथ से कोयला तोडने का हथौडा छीनकर फेक दिया और बोली, "माँ की बात कभी मत सुनना। यह बालवर्ष है, समझी ! बालवर्ष में बच्चो को गंदा काम करना मना है .. आज से तू डिपो से दूध लेने नही जाएगी। माँ के साथ सडक से सड़ा हुआ गोबर नहीं उठाएगी। बात समझ में आ रही है न ! दिमाग मे कुछ घुसा !"

तुलतुल की इतनी बातों के जवाब मे टुनी डरी-डरी-सी बोली, "हथौडा लौटा दो दीदी ! नहीं तो माँ मुझे बहुत डाँटेगी।"

"डाँटने तो दो। मिस से कह दूँगी। मज़ा चखा देंगी। तू अब भी क्यो खडी है? आ न मेरे साथ।"

इतना कहकर टुनी का हाथ पकड़कर तुलतुल उसे खींचती हुई खाने की मेज़ पर लाई। कुछ लगा नहीं था पर बेवकूफ़ लड़की रोने लगी। असल मे वह डाँट के डर से रो रही थी। तुलतुल क्या यह समझ नहीं रही थी ?

उसकी माँ जल्दी-जल्दी संदेश के खाली बक्से में चार-पाँच पूड़ियाँ थोडी-सी आलू की सूखी सब्जी और थोडा-सा गुड रखकर बोली, "जा टुनी, मॉ के पास जाकर खा ले।"

टुनी जान बचाकर भागी।

तुलतुल ने मन-ही-मन निश्चय कर लिया कि कल से अगर मॉ ने टुनी को भी एक जैसा खाना नही दिया तो तुलतुल भी खाना नहीं खाएगी। उसने मॉ से कह भी दिया। बोली, "मैं तो अच्छी भली मोटी हूँ, फिर भी इतना खाना देती हो और टुनी चिडिया जैसी है उसे कुछ नहीं देती। जानती नहीं माँ, यह बालवर्ष है ?"

मॉ बोली, "जानती हूँ। ज़्यादा बक-बक मत कर। लड़की के सर पर तो भूत सवार हुआ है।"

लेकिन भूत जम कर बैठ गया हो तो कोई चारा भी नहीं है।

खाना खाने के बाद तुलतुल ने देखा टुनी और उसकी माँ घर जा रही हैं। तुलतुल

ने डॉटकर नहीं, अच्छी तरह से कहा, "कल से टुनी यह सब गंदा काम नहीं करेगी। कल पापा तुझे स्कूल में दाखिल करवा देंगे।"

क्या यह टुनी की माँ को तंग करना हुआ ?

तुलतुल ने जाकर अपने पापा से सारी बातें कहीं। पापा सुनकर बोले, "सच मे दाखिल करवाना चाहिए और आजकल तो स्कूल मे फ़ीस भी नहीं देनी पड़ती। किताब-कॉपी सब मुफ्त मिलते हैं। टिफ़िन में खाना भी मुफ़्त मिलता है।"

"सच पापा ?"

"हाँ, मुन्नी, बिलकुल सच। यह नियम हो गया है।"

"तो फिर टुनी हिसाब हल कर पाएगी?"

"क्यो नहीं। सीखने पर ज़रूर कर सकेगी।"

"किताब पढ़ सकेगी, पापा ?"

"जरूर पढ़ सकेगी। कल सुबह जैसे ही वे लोग आएँगे टुनी को पकड़कर स्कूल में बैठा आऊँगा।"

तुलतुल खुशी के मारे झूम उठी।

अहा ! कल बड़ा मज़ा आएगा।

स्कूल में पहुँचते, तुलतुल मिस को जाकर कहेगी "मिस, मैंने आपका कहना माना है। हमारे घर मे जो काम करती है उसकी लड़की को ... ही-ही .... स्कूल मे ही ....।"

ही-ही तो तुलतुल ने यहीं कर लिया। स्कूल में मिस के सामने यह सब नहीं चलेगा। स्कूल में गंभीर, शांत, सभ्य ढग से बात करनी

पडती है।

रात में सोते समय तुलतुल का मन बड़ा खुश था। सोते समय उसने माँ को निर्देश दिया, "कल मेरे साथ-साथ टुनी को भी खाना दे देना। मॉ ! टुनी को भी अच्छी-अच्छी चीजे खाने के लिए देना। समझी न मॉ।"

मॉ नाराज होकर बोली, "सब समझ गई। तार-तार समझ गई। अब, ज़रा बकना बद कर और कृपा करके सो जा।"

तुलतुल तुरत सो गई।

ओ मॉ ! सुबह उठकर तुलतुल ने देखा यह क्या ? यह सुबह तो रोज की तरह ही सुबह है। पापा को उन्हे ले जाने की कोई जल्दी ही नहीं है। पापा घर पर ही नही थे। बाज़ार चले गए थे और टुनी ज्यो की त्यों फटी फ्राक पहनकर चाय के ढेर सारे बरतन धो रही थी।

तुलतुल नल के नीचे से टुनी को खींचकर बोली, "कल क्या कहा था?" टुनी बेवकूफ की तरह अपनी मॉ को देख रही थी। टुनी की मॉ बोली, "मुन्नी को क्या हो गया है ? दिमाग फिर गया है क्या?"

तुलतुल सीधे दुमंजिले पर पहुँची और कल शाम माँ से जो कपड़े लिए थे उन्हे लाकर टुनी को पहनने का हुक्म दिया और बोली, "पापा के लौटते ही स्कूल जाएँगे, समझी। और उसके पहले तू मेरे साथ खाना खाएगी। याद रहेगा ?"

क्या इसे टुनी की माँ को तंग करना कहा जाएगा ?

उसे तो उस समय स्कूल जाने के लिए नहीं कहा था ।

खाना खाते समय टुनी को न देखकर तुलतुल चिल्लाकर उसे पुकारने लगी। दादी माँ बोली, "टुनी अपने पापा से पूछने गई है।"

"क्या पूछने गई है ?"

"वह, स्कूल जाएगी या नही, यह अपने पापा से नहीं पूछेगी क्या? तुम्हारे कहने से ही होगा ? टुनी की माँ इसलिए बरतन छोडकर लडकी को लेकर घर पूछने गई है।"

दादी माँ की बात तो थोडी-थोडी ठीक लगती है पर तुलतुल को थोड़ा डर भी है।

टुनी के पापा कही उसे स्कूल जाने से मना न कर दें। इन लोगो का कोई भरोसा नहीं। अभी-अभी तो टुनी की माँ बोली थी कि पढने-लिखने से गरीब आदमी का काम चलेगा कैसे ?

"फ़ीस नही लगेगी, किताब के पैसे नही लगेगे यह सुनकर भी टुनी की माँ चुप रही।" यह बात घर जाकर वह जरूर कहेगी।

तुलतुल जब जूते-मोज़े, पहन रही थी, पापा बाजार से लौट आए। तुलतुल बोली "ओह पापा, आप बड़े डेजरस हैं। (यह बात वैसे अक्सर पापा ही तुलतुल को कहते हैं)। इतनी देर कर दी आपने ? टुनी भी देर कर रही है। उसके आते ही उसे स्कूल मे लेकर आ जाइएगा। यहीं पास के स्कूल में भरती करवा दीजिएगा। वहाँ बिना जूते-मोज़े पहने भी घुसने देते हैं, पापा। टुनी बेचारी के पास तो कुछ भी नहीं है। जब वह पास कर जाएगी, आप उसे जूते-मोज़े खरीदकर देगे न

पापा ? उसके पापा के पास ज़्यादा रुपए नहीं हैं इसलिए नहीं दे सकते। आप तो देगे न पापा ?"

फिर पापा का जवाब सुनने से पहले ही स्कूल की बस आ गई थी। और अब शाम को बस से उतरते ही उसे यह सुनना पड़ा कि टुनी की माँ ने तुलतुल की हरकतो से तग आकर काम छोड़ दिया है। सुबह जो अधमँजे बरतन को छोडकर चली गई थी, फिर वापस नहीं लौटी। पडोस के घर की सुखदा भी उसी मुहल्ले की है। माँ ने उसे भेजा था पर टुनी की माँ ने कहलवा दिया कि वह अब काम नहीं करेगी।

इसके माने टुनी की माँ का पापा से पूछने जाना एक बहाना था। बकवास था। वह स्कूल के डर से भाग गई।

ताज्जुब है ! कितनी बेवकूफ़ है वह !

घर के जो बड़े लोग हैं, उनमे से कोई तो टुनी की माँ को दोष नहीं दे रहा है। सभी तुलतुल की बेवकूफ़ी की बात कर रहे हैं। और ये लोग सभी पढ़े-लिखे लोग हैं ! लोग तो जानते हैं बालवर्ष मे क्या-क्या करना चाहिए। रोज तो अखबार पढ़ते हैं।

असल मे बड़ो को समझा ही नहीं जा सकता। बड़े लोग कभी कुछ बोलते हैं तो कभी कुछ। उनके सभी काम बड़े उलटे किस्म के हैं।

उस बार की तो बात है। तुलतुल जलपाईगुडी मे नाना के घर गई थी। नानाजी ने तुलतुल को 'दया के सागर विद्यासागर' पुस्तक

खरीद कर दी। उस समय वे क्या बोले थे ?

"महान व्यक्तियो की जीवनी पढ़, तुलतुल ! जितना हो सके, ऐसी किताबें पढना, समझी ? पढ़ना और इनके आदर्शों पर चलना।"

ओह मॉ ! उसके कई दिन बाद की बात है। जलपाईगुड़ी मे बडी ठंड पडी थी। एक गरीब लडका कोई पुराना कपड़ा माँग रहा था। तुलतुल ने अपना पहना हुआ कार्डिगन खोलकर उसे दे दिया। बाप रे बाप ! नानाजी ने ऐसी डाँट लगाई कि क्या कहना ! पागल, सिरफिरी लड़की, कहकर नानाजी और भी कुछ बडबडाने लगे। क्यों ? विद्यासागर क्या अपने शरीर के कपडे उतार कर गरीबो को नहीं दे देते थे ?

नानाजी बाद मे हॅसकर मज़ाक करते हुए बोले, "अब कान पकड़ता हूँ। किसी को विद्यासागर की जीवनी नहीं खरीद कर दूँगा। इतनी कीमती ऊनी कार्डिगन इस लडकी ने सड़क के भिखारी को दे दिया ?"

रास्ते के भिखारी को नहीं देगी तो क्या तुलतुल पैसे वालों के लड़के-लड़कियो को देगी ? देने पर भी वे क्या लेंगे ? और तुलतुल उन्हे देगी भी क्यों ? उनके पास नहीं है क्या ?

नीचे से भैया की आवाज सुनाई दी, "ऐ तुलतुल, खाना खाने आ न, छत पर क्यो बैठी है ?"

तुलतुल का मन डोल उठा। पेट में चूहे कूद रहे थे। फिर भी तुलतुल कठोर बनी बैठी रही। इतने में ही वह हिम्मत हार जाएगी? ... मिस ने यह भी कहा था, कितने बच्चो को दो बार भरपेट खाना

भी नही मिलता ।

भैया ने फिर पुकारकर कहा, "बरतन धोने के डर से नीचे नहीं उतर रही है, क्या ? हा, हा, हा। ही, ही, ही। इतना डरने की ज़रूरत नहीं, तुम्हारा कसूर माफ़ कर दिया गया है ।"

तुलतुल ने भी चिल्लाकर बोलना चाहा, "दंड किस चीज़ का ? मैंने क्या कोई गलती की है ?" पर वह कुछ बोल नहीं पाई। उसकी आवाज़ रुँध गई। अब दादी माँ ने पुकारा, "तुलतुल, पूरियाँ ठडी पड रही हैं।"

तुलतुल मुँह कठोर बनाकर वैसी ही बैठी रही।

इसके बाद ही माँ आई।

"यह क्या नखरा हो रहा है ? तुम्हें क्या सचमुच ही बरतन माँजने और कपडे धोने के लिए कहा गया है ? सरदी के दिनो मे काम का आदमी छूट जाए तो कैसा लगता है, तू क्या समझेगी ? कोई तुम्हे बेमतलब डॉटना थोड़े ही चाहता है ? ले अब, चल उठ। खाना खा ले। ज्यादा नखरे की ज़रूरत नहीं।"

तुलतुल गुस्सें मे ही बोली, "मैं नहीं जाती, जाओ। मैं नहीं खाऊँगी।"

"ठीक है। आने दो तुम्हारे पापा को, लाड़ली बेटी को इतना प्यार करने का मज़ा भी वे देख लें। बेटी की 'हाँ' में 'हाँ' मिलाकर बोले, "हाँ-हाँ टुनी को स्कूल में दाखिला दिला देना अच्छा रहेगा।" पर तू ही सोच टुनी अगर स्कूल जाने लगेगी तो उसकी माँ का कैसे गुज़ारा होगा ? टुनी कितना हाथ बँटाती है।"

तुलतुल के गले मे आज दुगनी ताकत थी। झटक कर बोली, "यही तो खराब है। मिस ने कहा है, छोटे-छोटे बच्चो से काम कराना बहुत बड़ा पाप है। समझी ? तुम सभी पापी हो।"

पर माँ इस भयकर बात को सुनकर भी नहीं घबराई। बल्कि हॅसकर बोली, "क्या करूँ, तू बोल ? पापी संसार में जन्म लिया है, पापी बनकर रह रही हूँ। इस दुनिया को नए सिरे से बदलने की क्षमता तो मेरी है नहीं और अगर ऐसा न किया जाए तो इस संसार का उद्धार भी नही होने का। तू जब बडी होगी तो इसे बदल डालना। तू और तेरे दोस्त सभी मिल कर। हम लोगों की तरह का पाप, तुम लोग नहीं करना।"

इस बात से न जाने क्या हुआ।

अचानक तुलतुल बिलखकर रो उठी। माँ से लिपटकर बोली, "पर माँ, अगर बडी होकर मैं भी तुम्हारी तरह उलट-पलट जाऊँ तो ? अगर बेवकूफ़ बन जाऊॅ तो ? अगर यह भूल जाऊँ कि सभी लोग एक समान हैं ।"

अनु देवलीना केजरीवाल

प्रश्न

1 स्कूल से लौटी तुलतुल की नाराजगी का क्या कारण था ?

2. 'लो आ गई बहादुर लड़की' दादी ने तुलतुल के लिए ऐसा क्यो कहा ?

3. तुलतुल टुनी के साथ कैसा व्यवहार करना चाहती थी और क्यो ?
4 विद्यासागर की जीवनी पढने का तुलतुल पर क्या असर हुआ ?
5 टुनी के प्रति तुलतुल के व्यवहार और घर के अन्य लोगो के व्यवहार में क्या अंतर था ?
6 कहानी के अंत मे माँ की बात सुनकर तुलतुल बिलखकर क्यो रो पडी ?

परिशिष्ट

लेखक परिचय

पन्नालाल पटेल

गुजराती के अग्रणी कथाकार श्री पन्नालाल पटेल अन्य भारतीय भाषाओ मे भी लोकप्रिय हैं। इनका जन्म डुगरपुर (राजस्थान) के मडली गाँव मे 7 मई 1912 को हुआ था। इनकी कहानियों और उपन्यासों मे गुजरात के जन-जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है। गुजरात के देहाती अचल के मानवीय चरित्रो की विशेषताओ को व्यक्त करने में पन्नालाल पटेल को विशेष सफलता मिली है। इनकी कृति 'मानवीनी भवाई' (जीवन एक नाटक) पर 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार प्रदान किया गया था।

सौ से अधिक रचनाओ के लेखक पन्नालाल पटेल गुजरात सरकार द्वारा कई बार पुरस्कृत हो चुके हैं। इनकी अनेक कहानियो और उपन्यासों का अन्य भारतीय भाषाओ मे अनुवाद हो चुका है। इनकी रचनाओ मे 'मानवीनी भवाई' के अतिरिक्त 'अमावस्या की उजरी रात', 'पार्थ ने कहो चढ़ावे बाण' (पाँच खड), 'वलामणा', 'धम्मर वलोणु' (उपन्यास),'तिलोत्तमा' तथा 'वात्रकने काठे' (कहानियाँ) उल्लेखनीय हैं।

ईश्वरचद्र विद्‌यासागर

ईश्वरचंद्र विद्‌यासागर बंगाल के ही नहीं, बल्कि पूरे भारतवर्ष के जाने-माने विद्‌वान, शिक्षाविद् और समाज-सुधारक थे। इनका जन्म सन् 1820 मे मिदनापुर (बगाल) के बीरसिह गाँव मे हुआ था। बँगला के अतिरिक्त इनका संस्कृत तथा अग्रेजी भाषा पर विशेष अधिकार

था। बगाल, बिहार और उडीसा मे शिक्षा के प्रसार के लिए तथा स्त्री-शिक्षा की उन्नति के लिए विद्यासागर ने सराहनीय कार्य किया है। इन्होने सरल भाषा में सुदर पाठ्यपुस्तको के अलावा सस्कृत और अग्रेजी के उत्तम साहित्य का अनुवाद भी किया है।

विद्यालयो मे पढाने के लिए विद्यासागर ने 'जीवन चरित', 'बोधोदय', 'कथामाला', 'आख्यानमजरी' आदि पुस्तको की रचना की। कालिदास और भवभूति पर आधारित 'शकुतला' और 'सीता वनवास' के अतिरिक्त इन्होने शेक्सपीयर की कृतियो का भी बँगला मे अनुवाद किया है।

अनतदेव शर्मा

अनतदेव शर्मा असमिया भाषा के सफल बाल-साहित्यकार के रूप मे विख्यात हैं। इन्होने बच्चो के लिए एक से बढकर एक रोचक उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं।

अनतदेव शर्मा की कहानियो की विशेषता यह है कि उनमे मनोरजन के साथ-साथ जीवन के लिए सदेश एव नैतिक शिक्षा भी मिलती है।

इनका निधन अल्पायु मे ही हो गया था। किंतु इनकी रचनाएँ आज भी नव-लेखको के लिए आदर्श उपस्थित करती हैं।

देवेंद्र सत्यार्थी

पजाबी और हिंदी के जाने-माने लोककथा के युगपुरुष देवेंद्र सत्यार्थी का जन्म संगरूर (पजाब) मे 28 मई 1908 को हुआ था। लोकगीतो और लोक-कथाओ की तलाश मे सत्यार्थी ने समूचे भारत की कई बार यात्राएँ की हैं, इसलिए उनकी रचनाओ मे दक्षिण के मलय-पवन के साथ आने वाली चदन की महक, विंध्याचल की पर्वतीय सुषमा और हिमालय की वादियों का सौरभ है।

मातृभाषा पजाबी के अतिरिक्त हिंदी, अग्रेजी और उर्दू पर इनका समान अधिकार है।

सत्यार्थी कुछ समय तक भारत सरकार के प्रकाशन विभाग की पत्रिका 'आजकल' के सपादक भी रहे हैं।

सत्यार्थी की कृतियों मे प्रमुख हैं, 'ब्रह्मपुत्र, 'दूधगाछ', 'रथ के पहिये' (उपन्यास), 'बेला फूले आधी रात', 'धीरे बहो गगा', 'धरती गाती है' (लोकगीत), 'एक युग एक प्रतीक' 'रेखाएँ बोल उठीं' (निबध) आदि।

अतोन चेखोव

रूसी कथाकार और नाटककार अतोन चेखोव का जन्म तगनरॉग (रूस) में 17 जनवरी 1860 को हुआ था। मध्यवर्गीय परिवार मे जन्मे चेखोव को अपने बचपन और जवानी मे काफी सघर्ष करना पडा। शुरू मे वे हास्य-व्यग्य की पत्र-पत्रिकाओं मे लेख लिखते थे, बाद मे उनकी कहानियो और उपन्यासो मे काफी गभीरता आती गई। चेखोव ने बच्चो के लिए भी काफी लिखा है। समाज के उपेक्षित वर्गों की समस्याओं का इन्होंने सफल चित्रण किया है।

थियेटर मे भी चेखोव ने सफल प्रयोग किए। 'सी गल', 'तीन बहनें', 'चेरी आर्चेर्ड' आदि उनके नाटक काफी लोकप्रिय हैं।

चौवालीस वर्ष की अल्पायु मे ही इस महान कलाकार का निधन हो गया।

र शौरिराजन

र शौरिराजन का जन्म तमिलनाडु के तजाऊर जिले में हुआ था। दक्षिण में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए इन्होंने सराहनीय कार्य किया है। 'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार समाचार' और 'ज्ञानभूमि' के सपादक-मडल में कार्य करते हुए लेखन की ओर इनकी रुचि बढी। अनुवाद के माध्यम से हिंदी और तमिल साहित्य के आदान-प्रदान के क्षेत्र में इनका योगदान उल्लेखनीय है।

भारत सरकार तथा विभिन्न साहित्यिक एव सार्वजनिक सस्थाओ से पुरस्कृत शौरिराजन हिंदी के स्वतंत्र लेखक भी हैं।

रमेश उपाध्याय

रमेश उपाध्याय हिंदी के लोकप्रिय कहानीकारो मे गिने जाते हैं। इनका जन्म 1 मार्च 1942 को एटा जिले (उत्तर प्रदेश) के बधारी गाँव मे हुआ था। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' और 'नवनीत' मे उपसपादक के रूप मे कार्य करने के बाद उपाध्याय जी इस समय व्यावसायिक अध्ययन महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय मे शिक्षण कार्य कर रहे हैं।

इनकी कृतियो मे 'शेष इतिहास', 'नदी के साथ', 'बदलाव से पहले' (उपन्यास), 'पेपरवेट' (नाटक) आदि उल्लेखनीय हैं।

अमृता प्रीतम

अमृता प्रीतम पजाबी की सफल कवयित्री, निबधकार, कहानीकार और उपन्यासकार हैं। हिंदी पाठको के बीच मे भी वे काफी लोकप्रिय हैं। इनका जन्म गुजराँवाला (पाकिस्तान) मे 31 *अगस्त 1919 को हुआ था। दिल्ली विश्वविद्यालय ने उत्कृष्ट लेखन के लिए इनको मानद* डी लिट की उपाधि प्रदान की।

पचहत्तर से अधिक कृतियो की रचयिता अमृता प्रीतम भारत सरकार द्वारा पद्मश्री उपाधि से सम्मानित तथा साहित्य अकादमी तथा ज्ञानपीठ पुरस्कारो से विभूषित हैं। 1986 मे इन्हे राज्य सभा का सदस्य मनोनीत किया गया। इनके अनेक उपन्यासो और कहानियो का अनुवाद भारतीय भाषाओ के अतिरिक्त ससार की अनेक भाषाओ मे हुआ है।

इनकी उत्कृष्ट कृतियाँ हैं 'यात्री', 'तेरहवाँ सूरज', 'जलते बुझते लोग' (उपन्यास), 'रसीदी टिकट' (आत्मकथा), 'तीसरी औरत' (लघु उपन्यास), 'सुनहरे कागज के कन्वास' (कविताएँ), 'काल चेतना' (सस्मरण), 'रतना और चेतना' पर क्रमश 'डाकू' और 'कादबरी' फिल्मे निर्मित हुईं।

हरिशंकर परसाई

हिंदी के जाने-माने व्यग्य-लेखक और कथाकार हरिशकर परसाई पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी काम कर चुके हैं। इनका जन्म 24 अगस्त 1924 को होशगाबाद (मध्य प्रदेश) के जमानी गाँव मे हुआ था। कला परिषद् तथा उत्तर प्रदेश अकादमी द्वारा पुरस्कृत परसाई को हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'साहित्य वाचस्पति' की मानद उपाधि भी प्राप्त है।

हिंदी साहित्य मे परसाई जी सफल व्यग्य लेखक के रूप मे प्रसिद्ध हैं। उनकी कृतियो मे 'नागफनी की कहानी' (उपन्यास), 'सदाचार का ताबीज', 'वैष्णव की फिसलन', 'निठल्ले की डायरी' (व्यग्य-कहानियाँ), 'पगडडियो का जमाना' (निबध) आदि उल्लेखनीय हैं। परसाई जी की सभी रचनाएँ 'परसाई रचनावली' (6 खडो मे) प्रकाशित हैं। सन् 1988 में इनका निधन हो गया ।

सआदत हसन मटो

सआदत हसन मटो उर्दू के सफल साहित्यकार हैं। इनका जन्म सन् 1912 मे पजाब मे हुआ था। बाल्यावस्था से ही उन्होने लिखना आरभ किया था। बाल मनोविज्ञान के बारीक चित्रण मे ये बड़े ही सिद्धहस्त हैं। समाज के कमज़ोर और दलित वर्ग की वेदना का यथार्थ चित्रण मटो से बढ़कर अन्य कोई साहित्यकार नहीं कर सकता है। इनके कुछ प्रमुख रचना संग्रह हैं ; 'धुआँ', 'ठडा गोश्त', 'मटो के अफसाने', 'सियाह हाशिये', 'सडक के किनारे' आदि। मटो ने बहुत से एकाकी नाटक और फिल्मी कहानियाँ भी लिखी हैं। सन् 1955 मे इनकी मृत्यु हो गई।

आशापूर्णा देवी

बँगला भाषा की विख्यात कथाकार श्रीमती आशापूर्णा देवी का जन्म कलकत्ता मे 8 फरवरी 1909 को हुआ था। जीवन-भर इन्होने साहित्य-साधना की और अपनी उत्कृष्ट कृतियो के

द्वारा समाज मे जागरण पैदा किया। भारत सरकार ने 1976 मे इनको 'पद्मश्री' की उपाधि से विभूषित किया। इनको कलकत्ता विश्वविद्यालय से 'भुवन मोहिनी' स्वर्ण पदक और पश्चिम बगाल सरकार की ओर से 'रवींद्र पुरस्कार' प्राप्त है।

इनकी प्रमुख कृतियो मे 'अग्निपरीक्षा', 'प्रथम प्रतिश्रुति', 'सुवर्णलता' (उपन्यास), 'गल्प पचाशत' (कहानी सग्रह) आदि उल्लेखनीय हैं। सन् 1995 में इनका निधन हो गया।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिको को

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की स्वतंत्रता,

प्रतिष्ठा और अवसर की समता

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन सब मे

व्यक्ति की गरिमा और [2][राष्ट्र की एकता

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली बंधुता

बढाने के लिए

दृढसंकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा मे आज तारीख 26 नवबर, 1949 ई० को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।

---

1 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "प्रभुत्व संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

2 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "राष्ट्र की एकता" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

भाग 4 क

मूल कर्तव्य

51 क **मूल कर्तव्य** – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शो, संस्थाओ, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय मे संजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगो मे समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओ का त्याग करे जो स्त्रियो के सम्मान के विरुद्ध है,

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी, और वन्य जीव है, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे,

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियो के सभी क्षेत्रो मे उत्कर्ष की ओर बढने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयो को छू ले।